चन्दामामा
मार्च १९८७

ज़िंदगी में मौजमस्ती की उमंग अभी शुरू ही हुई थी कि मुँहासे निकले और सारा मज़ा किरकिरा कर गए

साल में एक दिन तो ऐसा आता है जब हमें भी अपनी कलाकारी दिखाने का अवसर मिलता है. वह दिन आ गया था, मेरे स्कूल के सालाना जलसे का दिन. इसमें टेलेन्ट कान्टेस्ट के लिए मैं अपने गाने की खूब रिहर्सल कर रही थी. सब कुछ ठीकठाक चल रहा था कि तभी अचानक मैंने देखा, मेरे चेहरे पर मुंहासे निकल रहे हैं. ये क्या? मुंहासे और इस वक्त? नहीं, नहीं. ज़िंदगी में मौजमस्ती की उमंग अभी शुरू होने को है और ... चेहरे पर मुंहासे लिए मैं स्टेज पर तो कभी नहीं जा सकती.

तभी मेरी सहेली आ पहुंची. उसने मुझे बताया, "फ़िकर करने की कोई बात नहीं. बस क्लिअरेसिल लगाओ. मैंने भी इसे इस्तेमाल किया है. तुम्हें मालूम है क्लिअरेसिल कील-मुंहासे साफ़ करती है और उन्हें फैलने से भी रोकती है." मैंने क्लिअरेसिल लगाई और यक़ीन मानिए, इसने अपना असर दिखाया. मेरे इनाम लेते वक्त तो तालियों की गड़गड़ाहट से हाल गूंज उठा और मैंने मन ही मन क्लिअरेसिल को धन्यवाद दिया, जिसकी मेहरबानी से ज़िंदगी का ये खूबसूरत अवसर मेरे हाथ लगा.

क्लिअरेसिल ३ तरफ़ा असर दिखाती है :

१. कील-मुंहासों को खोलती है
इसकी विशेष औषधि प्रभावित कील-मुंहासों का मुंह खोलने में मदद करती है.

२. बैक्टीरिया से मुकाबला करती है
इसकी बैक्टीरिया-विरोधी क्रिया बैक्टीरिया से मुकाबला करती है, जिससे मुंहासे निकल और फैल सकते हैं.

३. कील-मुंहासे सुखा देती है
अधिक तेल सोखकर कील-मुंहासे सुखा देने में मदद करती है.

Clearasil
NEW IMPROVED

क्लिअरेसिल कील-मुंहासों का स्पेशलिस्ट, जो सचमुच असरदार है.

OBM/7991 HN

डायमंड कामिक्स में

कार्टूनिस्ट प्राण का

रमन और पॉप म्यूजिक 4/-

अन्य नये डायमंड कॉमिक्स

- पलटू और रोबट की वापसी
- चाचा भतीजा और महामाया का जाल
- मामा भांजा और बांसुरी का कमाल
- पिंकलू और खच्चू सियार
- अंकुर और पिल्ले की खोज

अंकुर बाल बुक क्लब

डायमंड कॉमिक्स की बच्चों के लिये नई निराली अनुपम योजना अंकुर बाल बुक क्लब के सदस्य बनिये और हर माह घर बैठे डायमंड कॉमिक्स डाकव्यय की फ्री सुविधा के साथ प्राप्त करें।

सदस्य बनने के लिए आपको क्या करना होगा :–

1. संलग्न कूपन पर अपना नाम व पता भर कर भेज दें। नाम व पता साफ-साफ लिखें ताकि पढ़ने में आसानी हो।
2. सदस्यता शुल्क पांच रुपये मनी आर्डर या डाक टिकट द्वारा कूपन के साथ भेजें। सदस्यता शुल्क प्राप्त होने पर ही सदस्य बनाया जायेगा।
3. हर माह पांच पुस्तकें एक साथ मंगवाने पर 2/- की विशेष छूट व डाक व्यय फ्री की सुविधा दी जायेगी।
4. आपको हर माह Choice कार्ड भेजा जायेगा यदि आपको निर्धारित पुस्तकें पसन्द हैं तो वह कार्ड भरकर हमें न भेजें।
5. इस योजना के अन्तर्गत हर माह की 20 तारीख को आपको वी.पी. भेजी जायेगी।

---------- सदस्यता कूपन ----------

मुझे अंकुर बाल क्लब का सदस्य बना लें। सदस्यता शुल्क तीन रुपये मनी आर्डर/डाक टिकट से साथ भेजा जा रहा है। (सदस्यता शुल्क प्राप्त न होने की स्थिति में आपको सदस्यता नहीं दी जायेगी) मैंने नियमों को अच्छी तरह पढ़ लिया है। मैं हर माह वी.पी. छुड़ाने का संकल्प करता/करती हूँ।

नाम ....

पिता का नाम ....

पता ....

डाकखाना ....

जिला ....

जूडो कराटे और बाक्सिंग सीखाने वाली पुस्तक

जूडो कराटे और बाक्सिंग कैसे सीखें 6/-

सचित्र जीवनी सहित

सुनील गावस्कर 10/-

स्वास्थ्य रक्षा के लिए उपयोगी पुस्तक

शारीरिक प्रशिक्षण पी० टी० व ड्रिल 6/-

हंसने और हंसाने के लिए पढ़िए

चुटकले ही चुटकले 10/-

कम्प्यूटर जानकारी के लिए

कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग कोर्स 12/-

फोटोग्राफी की सम्पूर्ण जानकारी के लिए पढ़िए

कम्पलीट फोटोग्राफी 6/-

डायमंड कामिक्स में 300 वां अंक

कार्टूनिस्ट प्राण का

चाचा चौधरी और राका का इंतकाम 6/-

खौफनाक राका ने वैद्यराज चक्रमाचार्य की अद्भुत दवाई पी रखी है, जिससे वह मर नहीं सकता। समुद्र में व्हेल मछली के पेट में वह चिरनिद्रा सो रहा था, कि अचानक उसकी नींद खुल गई। फुंफकारता हुआ वह पृथ्वी पर आ गया। कम्प्यूटर से तेज दिमाग वाले चाचा चौधरी और ताकतवर साबू के सामने राका एक बार फिर चुनौती बनकर खड़ा हो गया।

डायमंड कामिक्स प्रा.लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

एक नयी ज़बर्दस्त सनसनाहट! सवेरे सवेरे...

पेपरमिंट और पुदीने की ये सनसनाहट तेज़ी से विकसित हो रहे एक ऐसे फ़ार्मूले में है, जो आपके दांतों को चहकती सफ़ेदी और सांसों को सचमुच ताज़गी देता है.

नया पॉण्ड्स टूथपेस्ट. ये ब्रश करने में एक नयी उमंग जगाए, उसे मज़ेदार बनाए. आपके बच्चे तो इससे और भी बढ़िया तरह से ब्रश करेंगे.

नये पॉण्ड्स टूथपेस्ट का एक ट्यूब आज ही ख़रीदिए. और अपनी हर सुबह एक सुहानी सनसनाहट से भर लीजिए.

Pond's TOOTHPASTE

विशेष ... द्वारा तेज़ी से फैलता है 'एक्टीफ्लैक्स' द्वारा दांत पर जमी...

...प्लाक और अटकनों को अधिक आसानी से हटाता है। दांतों को चमकीले, साफ करता है।

नया
पॉण्ड्स
टूथपेस्ट

... दांत, और ताज़ी सांसों का सवेरा

M 9795

No society gossip,
no sensational blow-ups, yet..

Nearly 70% of Heritage readers fall in the upper income group of over Rs 2000 per month. Two thirds are male. The average age is 28 years.

– from an IMRB survey conducted in Oct 1986

It's an unusual magazine. It has a vision – for today and tomorrow.

It features ancient cities and contemporary fiction, culture and scientific developments, instead of filmstar interviews and political gossip. And it has found a growing readership, an IMRB survey reveals. Professionals, executives and their families, are reading The Heritage in depth – 40% from cover to cover, 42% more than half the magazine.

More than 80% of The Heritage readers are reading an issue more than once.

And over 90% are slowly building their own Heritage collection.

Isn't it time you discovered why?

CMP 2149

THE HERITAGE

So much in store, month after month.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा 'तीन व्यापारी' सुप्रसिद्ध कथाकार श्री मनोजदास की रचना है। 'राजा और सेवक' शीर्षक कहानी में आप देखेंगे कि राजा की सेवा में रहना वास्तव में तलवार की धार पर चलने के समान है–वह इस कहानी में पूरी तरह चरितार्थ हुआ है। राजा के आश्रय में जीनेवाले, अन्तरंग मित्र कहलानेवाले को किस प्रकार एक जटिल समस्या का सामना करना पड़ा, इस कहानी में वर्णित है।

अमर वाणी

आशाया ये दासास्ते, दासाः सर्वलोकस्य ।
आशा येषां दासी, तेषां दासायते लोकः ॥

[जो लोग आशाओं के दास हो जाते हैं, वे समस्त जगत के दास हो जाते हैं। और जो लोग आशाओं पर नियंत्रण कर लेते हैं, वे जगत को अपना दास बना लेते हैं।]

वर्ष : ३९ मार्च १९८७ अंक : ७

एक प्रति : २-५० :: वार्षिक चन्दा : ३०-००

'चन्दामामा' के संवाद

हिममानव

बहुत समय से इस तरह की कथाएँ सुनने में आरही हैं कि 'यति' नामक वे हिममानव अस्तित्व में हैं, जिनका सारा शरीर रोयों से भरा होता है। किन्तु इन प्राणियों को किसी ने अभी तक आँखों से नहीं देखा है। इटली के पर्वतारोही रीनहोलु मेरुनर का कहना है कि उन्होंने हाल ही में तिब्बत के पहाडों में एक ऐसे हिममानव को देखा है। वे इन प्राणियों से सम्बन्धित विवरणों का संग्रह करने में लगे हुए हैं।

पाम्पे का वैभव

इटली का वेसूवियस पर्वत जब ईस्वी सन् ७८ में फटा, तब पाम्पे नगर ध्वस्त हो गया था। हाल ही में जो खोज हुई, उससे यह बात स्पष्ट हो गयी है कि पाम्पे नगर प्रचलित धारणा की अपेक्षा बुहत अधिक संपन्न और सुन्दर नगर था। कहा जाता है कि अत्यन्त मूल्यवान मणि-माणिक्यों को तैयार करनेवाला कारख़ाना इसी नगर में अवस्थित था।

प्रथम महिला चिकित्सक

पी॰ टी. आइ. के समाचार-संस्थान ने यह समाचार प्रसारित किया है कि विश्व की सर्वप्रथम महिला चिकित्सक भारत में ही स्नातक हुई थी। मिस मेरी वर्गीस को लन्दन के मेडिकल काँलेज में प्रवेश देने से इनकार कर दिया गया था। भारतीय स्वास्थय संस्थान के अध्यक्ष डाँ॰ वी॰ परमेश्वर का कथन है कि मिस मेरी मद्रास मेडिकल काँलेज में सन् १८७५ में दाखिल हुई थीं और उन्होंने चार वर्ष ये स्नातक की उपादिध प्राप्त की थी।

पुराण कथाः

मयूर ध्वज

मणिपुर के राजा मयूरध्वज ने अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान आरंभ करके यज्ञ के अश्व को छोड़ दिया। उसी समय युधिष्ठिर ने भी अश्वमेध यज्ञ करने का निश्चय किया। युधिष्ठिर के यज्ञाश्व के पीछे कृष्ण और अर्जुन निकल पड़े। तब ताम्रध्वज ने मौक़ा पाकर युधिष्ठिर के यज्ञाश्व को पकड़कर किसी गुप्त स्थान में बाँध दिया।

कृष्ण और अर्जुन ने ब्राह्मण वेश धारण किया और किसी भी तरह यज्ञाश्व को पकड़ने के लिए मयूरध्वज की सभा में पहुँचे। मयूरध्वज ने श्रद्धा और आदर प्रकट करके अतिथियों का सत्कार किया और उनके आगमन का कारण पूछा। ब्राह्मण वेशधारी कृष्ण ने कहा, "राजन, जब मैं वन-मार्ग से यात्रा कर रहा था, तब अचानक एक सिंह ने मेरे बच्चे को पकड़ लिया। मैंने उससे अपने पुत्र को छोड़ देने के लिए प्रार्थना की। तब उस सिंह ने कहा कि अगर मैं उसे राजा मयूरध्वज के शरीर का आधा हिस्सा लाकर दे दूँ तो वह मेरे पुत्र को छोड़ देगा।"

यह बात सुनकर मयूरध्वज की रानी ने कहा, "ब्राह्मणदेव, पत्नी पति की अर्धांगिनी होती है। इसलिए आप लोग मेरे शरीर को ग्रहण कर राजा को छोड़ दीजिए।"

"महारानी, आप सत्य कहती हैं। पर पत्नी पति का वामांग होती है और हमें सिंह ने राजा का दायां हिस्सा लाने को कहा है।" ब्राह्मण बने कृष्णने कहा।

राजा मयूरध्वज बोले, "विप्रवर, आप मेरे शरीर का दायां भाग ग्रहण कर अपने पुत्र को छुड़ा लीजिए!" तभी राजा की बायी आँख से आँसू की एक बूँद गिर पड़ी। यह देखकर ब्राह्मण बोला, "आँसुओं के साथ मिलनेवाली भिक्षा को मैं ग्रहण नहीं कर सकता।"

"विप्रवर, एक उत्तम कार्य के लिए शरीर का दायां हिस्सा जो त्याग कर रहा है, उसका सौभाग्य बायें हिस्से को नहीं मिला। इसी व्यथा के कारण बायीं आंख से अश्रु-कण गिर पड़ा, इस व्यथा से नहीं कि शरीर का आधा हिस्सा जा रहा है।" मयूरध्वज ने उत्तर दिया।

दूसरे ही क्षण ब्राह्मण वेशधारी कृष्ण ने राजा का आलिंगन किया और अपने वास्तविक रूप में प्रकट होकर राजा को आशीर्वाद दिया। राजा मयूरध्वज अत्यन्त आनन्दित हुए। उन्होंने निर्विघ्न अपना यज्ञ समाप्त किया और युधिष्ठिर के यज्ञाश्व को स्वयं ले जाकर उन्हें सौंप दिया।

संतोषी सदा सुखी

विजयपुर के राजा सोमशेखर अत्यन्त दयालु और विनम्र थे, पर उनमें एक दोष था, वे किसी न किसी बात को लेकर सदा चिंतित रहा करते थे। उन्हें कभी किसी ने शान्त एवं प्रसन्न नहीं देखा था। बात छोटी हो या बड़ी, उन्हें चिन्ता में डाल ही देती थी। उनके परिजनों, मित्रों एवं मंत्रियों ने उन्हें प्रसन्न रखने के लिए हर संभव प्रयत्न किया, पर उन्हें सफलता न मिली। एक दिन की बात है राजा वन में शिकार खेलने के लिए गये। शाम तक बुहत दौड़-धूप करने के बाद भी एक भी शिकार उनके हाथ न लगा। राजा सोमशेखर को बड़ी निराशा हुई और वे उदास होकर राजमहल लौट आये।

राजा सोमशेखर का मंत्री धर्मनन्दन अत्यन्त बुद्धिमान और विवेकशील व्यक्ति था। उसने राजा की उदासी भांपकर कहा, "महाराज, शिकार खेलना राजाओं के मनोरंजन का एक कार्य है। शिकारी को अगर शिकार न मिले तो उसका दुखी होना स्वाभाविक है। पर एक राजा के लिए यह उचित और शोभनीय नहीं है। आप इतने बड़े साम्राज्य के अधिपति हैं, शिकार का मिलना न मिलना आपके लिए अधिक महत्वपूर्ण नहीं होना चाहिए। इसके अलावा, महाराज, शिकार मिल भी जाता तो आप अन्य किसी चिन्ता से परेशान हो उठते। हमारा आपसे निवेदन है कि आपकी ऐसी स्थिति परिजनों को तो दुखी करती ही है, पर प्रजा पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ता है।"

मंत्री धर्मनन्दन के इस प्रबोधन से भी राजा को आश्वासन न मिला और वे उसी तरह चिन्तामग्न बने रहे। दूसरे दिन राजा सोमशेखर जब अपनी रानी शुभलक्ष्मी के साथ भोजन कर रहे थे, तब वे सोने की थाली में से एक व्यंजन को अलग हटाकर खड़े होगये और बोले, "इसमें नमक नहीं है।"
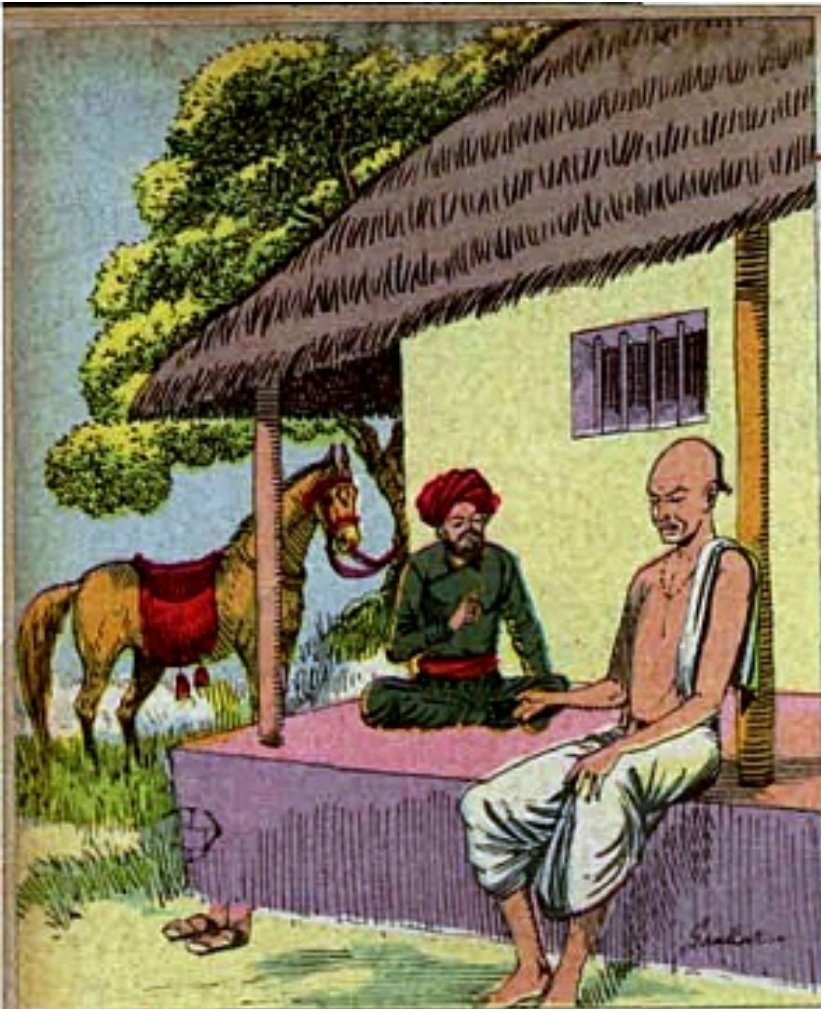
"स्वामी, आपकी थाली में अनेक प्रकार के व्यंजन परो से गये हैं। आप उन्हें खाकर तो देखिये !" रानी ने कहा ।

राजा ने रानी की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया और चिंतित भाव से सिर हिलाकर वहाँ से चले गये ।

एक दिन की बात है। मंत्री धर्मनन्दन ने राजा से कहा, "महाराज, हमारे नगर के परिसर में एक योगी पधारे हैं। मैं सोचता हूँ कि हम एक बार उनके दर्शन के लिए चलें ।"

राजा ने मंत्री का आग्रह स्वीकार किया ।

राजा सोमशेखर ने प्रणवानन्द योगी को साष्टांग प्रणाम किया और फिर निवेदन किया, "महात्मन, मैं एक बड़े देश का राजा हूँ। मेरी पत्नी अनुकूल आचरण करनेवाली धर्मनिष्ठ स्त्री है। मेरा कोष भी धन-संपत्ति से भरा हुआ है। पर न मालूम क्यों, मैं सदा चिंतित रहता हूँ, कभी प्रसन्न नहीं रह पाता ।"

योगी प्रणवानन्द मुस्कराकर बोले, "राजन, मैं आपकी चिन्ता का कारण समझ गया । उसका समाधान भी मुझे ज्ञात है । आपको एक काम करना होगा । वह यह कि एक ऐसे व्यक्ति की अंगूठी प्राप्त करनी होगी, जो सदा प्रसन्न रहता हो अंगूठी सोने की हो या चांदी की या अन्या किसी भी साधारण धातु की, पर वह ऐसे व्यक्ति की ही होनी चाहिए, जिसे किसी प्रकार की चिन्ता न हो ।"

योगी का परामर्श मानकर राजा सोमशेखर ने छद्मवेश धारण किया और एक घोड़े पर सवार होकर सदा प्रसन्न रहनेवाले व्यक्ति की खोज में चल पड़े । कुछ दिन बाद उन्हें एक ऐसा व्यक्ति दिखाई दिया जो हँस रहा था और अपने आपमें ही मस्त था ।

राजा ने उसके निकट जाकर पूछा, "तुम कौन हो ?"

"महानुभाव, मेरा नाम रामदत्त है और मैं पुरोहित हूँ ।" उस आदमी ने उत्तर दिया ।

"क्या तुम हर समय प्रसन्न रहते हो?" राजा ने पूछा ।

"महानुभाव, अगर सदा प्रसन्न रहा जा सके तो फिर और चाहिए ही क्या? मैं भी दुखी होता हूँ। जब कभी किसी ग़रीब की व्यथा देखता हूँ तो

चिंतित हो उठता हूँ।" पुरोहित रामदत्त ने जवाब दिया ।

राजा सोमशेखर उस स्थान से आगे बढ़े । कुछ दिनों के बाद उन्हें एक ज्योतिषी दिखाई दिया । उसे देखते ही राजा को ऐसा विश्वास-सा हुआ कि यह नित्य प्रसन्न रहनेवाला व्यक्ति होना चाहिए। यह आदमी भविष्य की घटना को पहले ही जान लेने के कारण किसी भी बात पर चिंता या आश्चर्य नहीं करता होगा ।

राजा सोमशेखर ने उससे भी वही प्रश्न किया, "क्या तुम नित्य प्रसन्न रहते हो?"

ज्योतिषी गोपालशर्मा ने उत्तर दिया, "महानुभाव, मैं भविष्य का ज्ञान रखता हूँ। इसलिए जहाँ भी कष्ट की आशंका होती है, उससे बचने का जागरूक उपाय करता हूँ। लेकिन जब से मुझे अपने मृत्यु के दिन का ज्ञान हुआ है, मैं भारी चिंता में डूब गया हूँ ।"

इसके बाद राजा सोमशेखर आगे बढ़े। थोड़ी दूर जाने के बाद राजा ने देखा कि एक गाँव में लोगों की भारी भीड़ जमा है और उस भीड़ के बीच में सिर पर नक़ाब ओढ़े एक विदूषक लोगों को कुछ लतीफ़े सुनाकर हँसा रहा है और स्वयं भी हँसते हुए नाच रहा है ।

जब उसका नाच समाप्त हुआ तो राजा ने उसके सामने सोने का एक सिक्का फेंक दिया और पूछा, "मुझे ऐसा लगता है कि तुम सदा प्रसन्न रहनेवाले व्यक्ति हो! क्या मेरी बात सच है?"

यह सवाल सुनकर विदूषक ने अपने सिर पर

से नक़ाब उतार दी। राजा सोमशेखर ने देखा कि उसके गालों पर आँसू की सूखी धाराएँ अंकित हैं ।

विदूषक भूषण ने राजा सोमशेखर से कहा, "महानुभाव, मैं चार पैसे कमाने के लिए हँसने-नाचने का धंधा करता हूँ। ऐसा न करूँ तो मेरी औरत और बच्चों को भूख से तड़पना पड़ता है ।"

यह उत्तर सुनकर राजा की चिंता बहुत अधिक बढ़ गयी। राजा सोमशेखर आगे बढ़े। इसी तरह यात्रा में कई दिन निकल गये, पर उन्हें कहीं भी सदा प्रसन्न रहनेवाला व्यक्ति दिखाई नहीं दिया।

एक दिन राजा यात्रा की थकान से शिथिल होकर राह के किनारे एक पड़ से सटकर बैठ
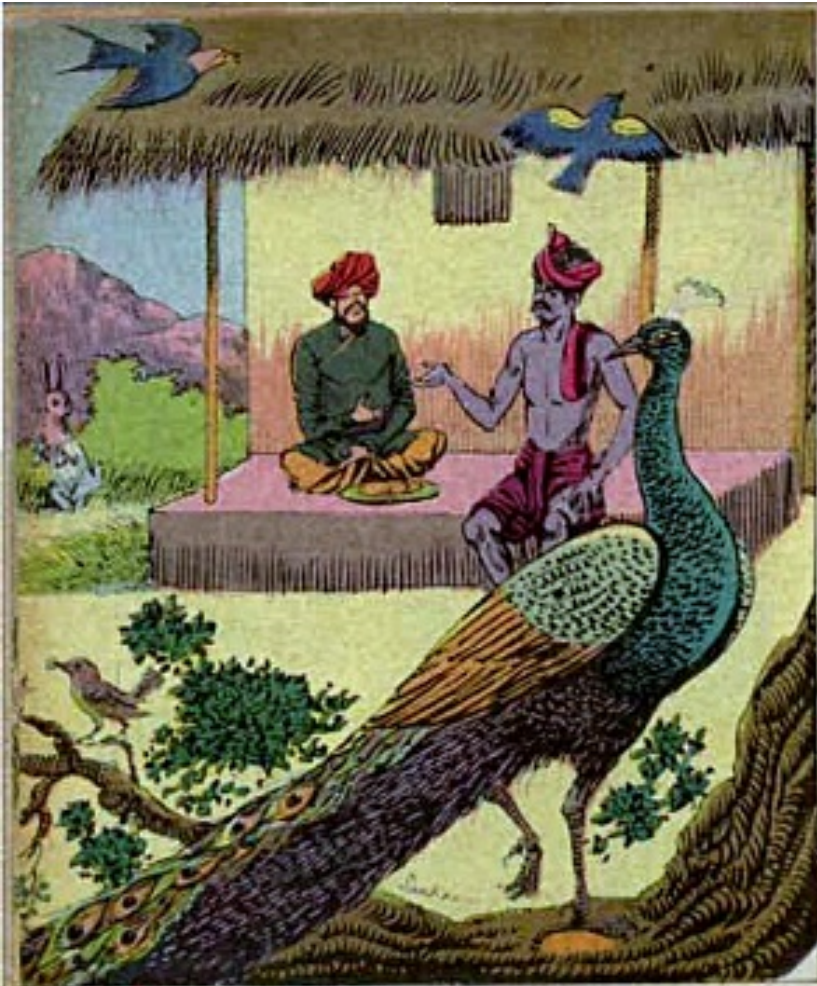
गये। धीरे-धीरे उनकी आँख लग गयी ।

कुछ देर सोने के बाद राजा की आँखें खुल गयीं । साथ ही भूख भी सताने लगी । राजा ने एक बार चारों तरफ नज़र दौड़ायी और उठ खड़े हुए । उसी समय उन्हें पेड़ काटे जाने की आवाज़ सुनाई दी । राजा ने घोड़े की लगाम थामी और उस आवाज़ की दिशा में बढ़ने लगे । उन्हें एक जगह एक आदमी कुल्हाड़ी से लकड़ी काटता दिखाई दिया ।

उस लकड़हारे ने राजा को देखते ही उत्साह में भरकर पूछा, "महानुभाव, प्रणाम! आप इस प्रदेश में कब आये?"

राजा ने बताया कि वे रास्ता भटक गये हैं । तब लकडहारे ने तुरन्त कहा, "तब तो आप भूखे भी होंगे । आप मेरे अतिथि हैं । आइये!" यह कहकर दीनानाथ नाम का वह लकड़हारा राजा सोमशेखर को अपनी झोंपड़ी में ले गया ।

राजा हाथ-पैर धोने लगे । इस बीच दीनानाथ चार रोटी ले आया और उन्हें राजा के सामने रख दिया ।

राजा ने लकड़हारे से पूछा, "क्या तुम यहाँ अकेले ही रहते हो?"

यह सवाल सुनकर लकड़हारा हँस पड़ा और बोला, "मैं अकेला ही रहता हूँ । लेकिन इस प्रदेश में खूब गानेवाले पक्षी, नाचनेवाले मोर, खरगोश, गिलहरियाँ हैं । ये सब पक्षी और पशु मेरे दोस्त हैं । इसके अलावा आप जैसे अतिथिजन भी चाहे जब आजाते हैं ।"

इसके बाद राजा सोमशेखर और दीनानाथ लकड़हारा बातचीत करने लगे । कितना समय बीत गया, कुछ पता ही न चला । राजा के मन में पूरा विश्वास हो गया कि उन्होंने सदा प्रसन्न व्यक्ति को देख लिया है ।

राजा ने दीनानाथ से पूछा, "मैं समझता हूँ कि इस अरण्य-प्रदेश में तुम आनन्दपूर्वक अपना समय बिताते हो !"

"आपका कहना एकदम सत्य है । मैं इस अरण्य प्रदेश में इतना सुखी हूँ कि इसे कभी छोड़ भी नहीं सकता ।" दीनानाथ ने जवाब दिया ।

यह उत्तर सुनकर राजा पूरी तरह आश्वस्त होगये और समझ गये कि वे जिस व्यक्ति की खोज कर रहे थे, वह उन्हें मिल गया है ।

राजा सोमशेखर ने लकड़हारे दीनानाथ से कहा, "तुम मुझे एक अंगूठी दे सकते हो? भले ही वह लोहे अथवा पीतल की हो। इसके बदले में तुम मुझसे जो कुछ भी मांगोगे, मैं दूँगा।"

यह प्रश्न सुनकर लकड़हारा खिलखिलाकर हँस पड़ा और बोला, "किसी चीज़ के बदले नहीं, मैं आपको मुफ्त में भी दे सकता था, पर मुश्किल यह है कि मेरे पास अंगूठी नहीं है।"

राजा सोमशेखर ने लकड़हारे दीनानाथ के आतिथ्य के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट की और विजयपुर लौट आये। दूसरे दिन राजा योगी प्रणवानन्द के पास पहुँचे और बोले, "महात्मन, मैंने अत्यन्त श्रम उठाकर एक सदा प्रसन्न रहनेवाले व्यक्ति को तो देख लिया, लेकिन उसके पस अंगूठी नहीं है।"

योगी प्रणवानन्द मुस्कराकर बोले, "आप जिस सदा प्रसन्न व्यक्ति की बात कर रहे हैं, उसके पास एक अंगूठी भी नहीं है। फिर भी वह बिना किसी चिन्ता के प्रसन्न है। आप तो इतने विशाल राज्य के स्वामी हैं, फिर आप क्यों चिंताग्रस्त रहते हैं। क्या आप मुझे उस लकड़हारे की खुशी का कारण बता सकते हैं?"

यह प्रश्न सुनकर राजा थोड़ी देर सोचते रहे, फिर बोले, "शायद उसे प्रसन्नता का मूल कारण ज्ञात होगया है। मुझे तो ऐसा लगता है कि वह संतोषी है, इसलिए प्रसन्न है।"

प्रणवानन्द ने सोमशेखर से कहा, "हाँ, महाराज! संतोष ही उसकी इतनी अधिक प्रसन्नता का कारण है। संतोषी, परम सुखी! उस लकड़हारे में प्रबल कामनाएँ नहीं हैं। मनुष्य के भीतर ज्यों-ज्यों कामनाएँ बढ़ती हैं, उसकी चिंता और अशांति भी बढ़ती जाती है। हमारी सारी कामनाएँ पूर्ण तो हो नहीं सकतीं। असफल कामनाओं के कारण मनुष्य हताश, उदास हो उठता है। इसलिए हमारे पास जो कुछ है, उसी में सन्तुष्ट, सुखी रहकर जीवन बिताना चाहिए।" योगी प्रणवानन्द ने हितोपदेश दिया।

राजा सोमशेखर योगी को प्रणाम कर राजमहल लौट आये। इसके बाद उनके मन में चिंता और अशांति के लिए कोई स्थान न रहा। वे सदा प्रसन्न रहने लगे।

राजा और सेवक

विदेह देश के राजा विक्रमकीर्ति का एक अन्तरंग मित्र था, नाम था चिन्मय। राजा विक्रमकीर्त्ति स्नेहशील और उदार हृदय के व्यक्ति थे तथा गुण का आदर करते थे। उधर चिन्मय भी राजा के लिए अपना सर्वस्व देने को तत्पर रहता था। वह राजा का सच्चा हितैषी मित्र था, पर साथ ही उसमें नीति-अनीति का विवेक बहुत गहरा था और वह अपने कर्त्तव्य के प्रति बहुत जागरूक था। महाराजा के साथ चिन्मय का निकट परिचय देखकर राज्य के अनेक अधिकारी उससे ईर्ष्या करते थे। वे लोग किसी भी तरह राजा और चिन्मय के बीच मनमुटाव पैदा करने का प्रयत्न करते थे।

विक्रमकीर्ति को अपनी माँ से बहुत अधिक प्रेम था। अचानक एक दिन राजमाता का देहान्त हो गया। राजा विक्रमकीर्ति दुख में डूब गये। नगर के सभी प्रमुख व्यक्ति राजा के समक्ष उपस्थित हो उन्हें सांत्वना देने लगे। ऐसे समय चिन्मय पूरी तरह अनुपस्थित रहा। न तो उसने कोई संदेश भेजा, न राजभवन में आया। उसने राजमाता के अंतिम संस्कार में भी भाग नहीं लिया।

राजा विक्रमकीर्ति का मन मलिन हो उठा और वे कुपित होकर बोले, "चिन्मय के न आने का क्या कारण हो सकता है?"

"महाराज, कोई बड़ा कारण नहीं है। वह अपने सेवक शिवदयाल के घर के विवाह-उत्सव में भाग लेने गया है। उसकी दृष्टि में एक राजमाता की मृत्यु अधिक महत्वपूर्ण घटना नहीं है, बल्कि एक ग़रीब साधारण घर की लड़की का विवाह अधिक महत्वपूर्ण है। इसीलिए बुज़ुर्गों का कहना है कि जिन लोगों में पात्रता न हो, उन्हें ऊँचा आसन नहीं देना चाहिए।" चिन्मय के शत्रुओं ने अवसर का लाभ उठाया।

राजा पहले से ही शोकाकुल थे, क्रुद्ध भी थे,

अब लोगों के इस आक्षेप से उनका क्रोध और भी बढ़ गया। उन्होंने तुरन्त सेवकों को बुलाया और क्रोध से उन्मत्त होकर आदेश दिया, "तुम लोग तुरन्त जाओ और उस विश्वासघाती चिन्मय को पकड़कर कारागार में डाल दो!"

राजकर्मचारी तुरन्त शिवदयाल के घर में गये और विवाह-उत्सव में बैठे चिन्मय को अचानक बन्दी बनाकर कारागार में डाल दिया।

यह समाचार विक्रमकीर्ति के मंत्री अमलचंद्र को मिला। उसने राजा से मिलकर कहा, "महाराज, चिन्मय शिषटाचार का महत्व जानता है। स्वयं आपने मुझसे बताया था कि वह बड़ा कुशल और मेधावी है और उसने कई बार अपने परामर्श से राज्य का हित-सम्पादन किया है। वह आपका अन्तरंग मित्र भी है। अगर वह आपके शोकाकुल हृदय को धीरज देने और राजमाता के अंतिम संस्कार में भाग लेने के लिए नहीं आया, तो इसके पीछे अवश्य ही कोई गंभीर कारण होना चाहिए। मेरा सुझाव है कि उससे हम दोनों मिलें और कारण जानने का प्रयत्न करें।"

"अमलचंद्र, कारण तो स्पष्ट है। राजा और मित्र से बढ़कर उसके लिए एक मामूली सेवक है।" राजा ने खिन्न होकर उत्तर दिया।

महाराज, आप क्षमा करें। मेरा अनुमान है कि हमने चिन्मय को समझने में भूल की है।" मंत्री अमलचंद्र ने कहा।

राजा कुछ क्षण मौन रहे, फिर बोले, "अच्छी बात है, चलिये!"

राजा विक्रमकीर्ति और मंत्री अमलचंद्र कारागार में चिन्मय के पास पहुँचे। राजा ने चिन्मय की तरफ तीक्ष्ण दृष्टि डालकर कहा, "मैं तुम्हें अपना अन्तरंग मित्र मानकर बहुत समय तक भुलावे में रहा। मेरी माताजी चली गयीं। उन्हें खोकर मैं घोर मानसिक व्यथा में पड़ गया, पर उस समय एक मित्र के अन्दर मेरे पास आकर मुझे सांत्वना देने की भावना भी जागृत नहीं हुई। यही नहीं देश की राजमाता के अंतिम संस्कार में सम्मिलित होने का शिष्टाचार भी तुममें नहीं जागा। मैंने उनकी आत्मा की शान्ति के लिए कितना धन खर्च कर क्रिया-कर्म सम्पन्न किया, लेकिन तुम उसमें भाग लेने न आये और उलटे एक सेवक के घर के विवाह-उत्सव में लगे रहे। वही तुम्हें

अधिक महत्वपूर्ण प्रतीत हआ, नहीं?"

अपने मित्र राजा के आक्षेपों को सुनकर चिन्मय तड़प उठा, बोला, "महाराज, आपने मुझे अपना अन्तरंग मित्र मानने में कोई भूल नहीं की है। मैं आपसे बताना चाहता हूँ कि अपने सेवक के घर के विवाह-कार्य में मुझे क्यों इतनी दिलचस्पी लेनी पड़ी। शिवदयाल एक संतान-विहीन ब्राह्मण है, ऊपर से ग़रीब भी । उसने एक अनाथ बालिका को पाल-पोसकर बड़ा किया और जब वह बड़ी हुई तो वर की खोज करके उसके विवाह का आयोजन किया । उस अनाथ बालिका के लिए मेरे अन्दर भी ममता का भाव रहा है और उसके पालन-पोषण में मैं भी किसी रूप में जिम्मेदार रहा हूँ । कन्यादान की विधि पूरी होने तक मेरा वहाँ रहना आवश्यक था। मनुष्य के मन को सुखी और दुखी करनेवाले प्रसंगों में राजा और सेवक का अन्तर नहीं होता। उस ग़रीब लड़की का विवाह मेरे लिए आमोद-प्रमोद या मनोरंजन की चीज़ नहीं था। मैं कर्त्तव्य की भावना से बँधा था—एक अभिभावक की कर्त्तव्य-भावना से । मेरा हृदय मुझे कचोट रहा था कि मैं कब भागकर आपके पास पंहुचूँ और आपके सन्तप्त हृदय को शान्त करूँ। जिस क्षण मैं आपके दर्शनों के लिए और आपके दुख में भागीदार होने के लिए शिवदयाल के घर से निकलना चाहता था उसी क्षण आपके निजी सैनिकों ने मुझे बन्दी बनाया ।"

चिन्मय का उत्तर सुनकर राजा विक्रमकीर्ति अपनी जल्दीबाजी और अविवेकशीलता पर लज्जित हो उठे, बोले, "चिन्मय, समाचार की वास्तविकता और गंभीरता को जाने बिना मैंने तुम्हारे साथ कठोर व्यवहार किया है । इसका मुख्य कारण तुम्हारे प्रति ईर्ष्यालु कुछ लोगों चुगलखोरी है । गरीब घर का विवाह और महान अंत्य क्रियाएँ— वास्तव में हर घटना का महत्व उसके सन्दर्भ से हाता है । पर उन द्वेषी लोगों ने राजा और सेवक की दुटाई देकर मेरी मति भ्रष्ट की । मैं उन्हें दंडित करूँगा ।"

राजा विक्रमकीर्ति ने स्वयं चिन्मय की हथकड़ियाँ खोल दीं और बड़े प्रेम के साथ उसका आलिंगन किया ।

[१०]

[चित्रसेन और उग्राक्ष ने अपने अनुचरों की सहायता से कपिलपुर के दुर्ग पर अधिकार कर लिया और अंधेरी कोठरी में बन्दी बने कपिलपुर के राजा वीरसिंह को बन्धनमुक्त किया। वीरसिंह ने अपनी पुत्री कांतिमती से पूछा, "राजद्रोही नागवर्माकहाँ है?" तब चित्रसेन ने उन्हें बताया कि उसे बन्दी बनाने के लिए उसने अपने सेनापति को भेजा है। आगे पढ़िये...]

चित्रसेन की बातें सुनकर महाराजा वीरसिंह को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने उग्राक्ष की ओर एक बार दृष्टिपात किया, फिर चित्रसेन की ओर मुड़कर बोले, "चित्रसेन, यह बात मेरे सुनने में नहीं आयी थी कि उग्राक्ष और तुम्हारे बीच का सम्बन्ध मालिक और सेवक के जैसा है। मेरे पास जो समाचार पहुँचा था, वह इससे कुछ भिन्न था। इसलिए नागवर्मा के भावी द्रोह की संभावना को जानकर भी मैं पड़ोसी राजा होते हुए भी तुमसे सहायता की याचना नहीं कर पाया। अगर मुझे पहले से ही यह ज्ञात होता तो मैं अनेक संकटों से बच सकता था और तुम्हें भी इस युद्ध की कठिन स्थिति में न पड़ना पड़ता। पर किसी भी होनहार को टालना आसान नहीं होता। फिर भी, हम इस सारे संकट से निकल आये, यह बड़ी बात है।"

"हाँ, महाराज! उग्राक्ष की बातचीत का तरीक़ा कभी-कभी कुछ भ्रान्ति उत्पन्न कर देता

है । आपकी पुत्री भी कुछ इसीप्रकार की गलतफ़हमी का शिकार बन गयी थी ।'' चित्रसेन ने स्पष्ट किया ।

चित्रसेन का उत्तर सुनकर कांतिमती के चेहरे पर मन्द हास्य छागया । पर उग्राक्ष जड़वत वीरसिंह की ओर देखता रह गया । वीरसिंह क्षण भर मौन रहकर उग्राक्ष से बोले, ''उग्राक्ष, चित्रसेन की बातों में कोई असत्य तो नहीं है न?''

''महाराज, हमारे महाराज चित्रसेन ने जो कुछ कहा, पूर्ण सत्य है । मैं बड़ी उत्सुकता से इस बात की प्रतीक्षा कर रहा हूँ कि महाराजा चित्रसेन कब अपनी महारानी को लेकर आयेंगे?'' उग्राक्ष ने उत्तर दिया ।

राजा वीरसिंह ने देखा कि उग्राक्ष की बात सुनकर राजकुमारी कांतिमती का चेहरा लज्जा से लाल हो उठा और उसने सिर झुका लिया । राजा उससे कुछ कहने को हुए कि तभी दो सैनिक दौड़ कर वहाँ आये और हाँफते हुए बोले, ''महाराज, द्रोही नागवर्मा भारी सेना के साथ हमारे दुर्ग के निकट पहुँच रहा है ।''

नागवर्मा का नाम सुनकर वीरसिंह चौंक उठे । चित्रसेन को यह समाचार आश्चर्यजनक लगा । उसके मन में अनेक प्रकार की शंकाएँ उठने लगीं । क्या नागवर्मा ने धवलगिरि को पराजित कर दिया है? यदि वह स्वयं पराजित होकर भागता हुआ इस तरफ़ आ रहा है तो मेरा सेनापति अजयसिंह कहाँ है, जिसे मैंने अपनी सेना के साथ भेजा था? स्थिति जो भी हो, सबसे पहले हमें दुर्ग की रक्षा के लिए उचित प्रयत्न करना चाहिए

सब सोच-विचारकर चित्रसेन ने उग्राक्ष से कहा, ''उग्राक्ष, अगर नागवर्मा धवलगिरि को पराजित करके आ रहा है, तब तो उसकी शक्ति बहुत बड़ी और मनोबल भी बहुत ऊँचा होना चाहिए । और अगर वह स्वयं पराजित होकर भागा हुआ आ रहा है, तब हमें उसे दुबारा मात देने में कुछ अधिक कठिनाई नहीं होगी । एक काम सबसे पहले करना है । तुम अपने सेवकों के साथ दुर्ग की दीवारों की रक्षा करो! बुर्जियों पर रक्षा के लिए कुछ तीरन्दाज़ों को नियुक्त करना होगा । लेकिन अमरपाल कहाँ है?''

''वे शत्रु-सेना की ताक़त का अन्दाज़ लगाने के लिए स्वयं बन की तरफ़ निकल गये हैं ।''

अमरपाल के दल के कुछ सैनिकों ने बताया ।

"उग्राक्ष, तुम अपने सेवकों के साथ दुर्ग के द्वारों की...." चित्रसेन आगे कुछ कहने जा ही रहा था कि उग्राक्ष बीच में ही ठठाकर हँस पड़ा और बोला, "महाराज, दर्ग के द्वार और बुर्ज कहाँ रहें? इस समय तो दुर्ग की दीवारों में सर्वत्र द्वार ही द्वार हैं । मेरे सेवकों ने कुदालों से दीवारों में बड़े-बड़े छेद बना दिये और दीवार के कुछ हिस्सों को तो नींव-सहित उखाड़ कर रख दिया । बुर्जियों की हालत तो यह है कि वे कंकड़-पत्थरों के रूप में इधर-उधर बिखरी पड़ी हैं । हमने दुर्ग पर कब्ज़ा करने के लिए जो घोर कृत्य किया, उसके परिणाम की ओर शायद आपका ध्यान नहीं गया ।"

"ओह, इस विषय में तो मैंने सोचा ही नहीं । हम तो मुसीबत में फँस गये हैं । दुश्मन हमें चारों तरफ़ से घेर सकता है । मैंने कल्पना तक नहीं की थी कि नागवर्मा धवलगिरि पर विजय प्राप्त कर इतना शीघ्र इधर लौट आ सकता है!" चित्रसेन ने कुछ आश्चर्य और दुख के साथ कहा ।

इस बीच अमरपाल वहाँ दौड़ता हुआ आया और बोला, "महाराज, वह द्रोही नागवर्मा इस तरफ़ विजयी होकर नहीं लौट रहा है, बल्कि युद्ध के मैदान से भागकर इधर आरहा है । उसके साथ भी कोई बड़ी सेना नहीं है । हमारे ही पक्ष के कुछ सैनिक उसकी सेना का पीछा करते हुए इधर आ रहे हैं । या तो वे सैनिक आपके पिता तारकेश्वर महाराज के सैनिक होंगे या आपकी तरफ से मदद के लिए भेजे गये सैनिक होंगे ।

अमरपाल की बातें सुनकर उग्राक्ष खुशी से झूम उठा और ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगा । चित्रसेन की प्रसन्नता का कोई पार न रहा । उसने उत्साहित होकर अमरपाल से कहा, "अमरपाल, तुम हमारे सभी सैनिकों को एक स्थान पर एकत्रित करके मेरी प्रतीक्षा करो! हम उस द्रोही का अन्त कर इस नीच शत्रु से छुटकारा पाना चाहते हैं ।"

"महाराज, मुझे एक उत्तम उपाय सूझ रहा है । यदि आप अनुमति दें तो मैं बताऊँ ।" उग्राक्ष ने कहा ।

"जल्दी बताओ! विलम्ब से हानि हो सकती है ।" चित्रसेन ने उत्सुकता दिखायी ।

"नागवर्मा को उसकी सेना के साथ दुर्ग में प्रवेश करने देना चाहिए । इसके बाद उसे घेरकर हम उसे दल-बल सहित यमलोक पहुँचा सकते

हैं ।" उग्राक्ष ने अपना विचार प्रकट किया ।

"महाराज, यह तो बड़ा अच्छा उपाय है । द्रोही नागवर्मा अच्छी तरह से जानता है कि पीछे से हमारे सैनिक उसका सर्वनाश करने के लिए बढ़े चले आ रहे हैं । वह निश्चय ही यह सोचकर इस तरफ़ भागा आ रहा है कि कपिलपुर का दुर्ग उसकी रक्षा करेगा । जब उसे यह मालूम हो जायेगा कि यह दुर्ग हमारे कब्ज़े में है, तब वह इस ओर आये बिना ही कहीं भाग सकता है ।" अमरपाल ने कहा ।

"यह बात भी सही है!" कहकर चित्रसेन पल भर सोचता हुआ मौन खड़ा रहा, फिर उग्राक्ष की ओर मुड़कर बोला, "अगर हमने एकबार नागवर्मा को उसकी सेना सहित दुर्ग के अन्दर प्रवेश करने दिया तो इस बात का क्या भरोसा है कि उसके सैनिक राजमहल में प्रवेश नहीं करेंगे? मुझे यह एक ख़तरे की बात लगती है ।"

"महाराज, इस तरह का ख़तरा पैदा ही न हो, यह मेरी जिम्मेदारी है । अभी तक आप मेरे राक्षस-अनुचरों की शक्ति से अपरिचित हैं । पहले हमें किसी भी तरह से नागवर्मा को पकड़कर उसका संहार करना है । नागवर्मा के जीवित रहते इस प्रदेश में शान्ति एवं सुरक्षा की कल्पना नहीं हो सकती । यदि वह हमारे हाथों से बचकर भाग गया तो समझ लीजिए कि वह सदा हमारे रास्ते का काँटा बनकर रहेगा ।" उग्राक्ष ने गंभीर होकर कहा ।

"तुमने एकदम सच कहा, उग्राक्ष!" यह कहकर राजा वीरसिंह ने उसकी प्रशंसा की, फिर चारों तरफ़ फैले हुए सैनिकों से बोले, "इस समय तुम्हारी शक्ति की परीक्षा है । इस बार नागवर्मा के साथ पूरा फैसला होगा और यह अन्तिम फैसला होगा । कपिलपुर राज्य को उसका त्रास झेलते हुए बहुत दिन होगये हैं । हमें न केवल इस त्रास से मुक्त होना है, बल्कि दूसरे राज्यों को भी इस पापी की धोखाधड़ी से मुक्त करना है । मैं ऐलान करता हूँ कि तुममें से कोई भी वीर अगर उस द्रोही नागवर्मा को जीवित बन्दी बनाकर मेरे हाथों में सौंपेगा, उसे मैं अपना आधा राज्य दे दूगाँ । जो उसका सिर काटकर लायेगा, उसे एक हज़ार स्वर्ण-मुद्राएँ दूँगा ।

"आधा राज्य!" यह कहकर राजकुमारी कांतिमती ने आश्चर्य प्रकट करते हुए अपने पिता

की ओर देखा ।

"हाँ, हाँ! आधा राज्य! उस पापी ने मुझसे द्रोह करके न केवल मेरे राज्य में उत्पात मचाया है, बल्कि मुझे इस अंधेरी कोठरी में बन्द करके मुझे अनेक यंत्रणाएँ भी दी हैं । कांतिमति, बेटी, तुम नहीं जानतीं यह पूरी तरह नहीं जानतीं कि नागवर्मा जैसे शत्रु का अंत कितना शांतिदायक होगा? उसे बन्दी बनाकर लाने का अर्थ है— देश के सारे उत्पातों को रस्सियों से जकड़ देना । इसके बाद हमारा राज्य कितना सुखमय शांतिमय होगा? फिर, बेटी, मैं एक क्षत्रिय राजा हूँ । अपमान की सज़ा देना मेरा क्षात्र-धर्म है । अगर कोई नागवर्मा को बन्दी बनाकर मेरे अपमान का बदला लेता है, तो मैं उसे आधा राज्य तो क्या, कुछ और भी दे सकता हूँ ।" राजा वीरसिंह ने कहा ।

"अब हमें बड़ी सावधानी से काम लेना है । नागवर्मा को इस बात का पता नहीं लगना चाहिए कि दुर्ग में एक भी प्राणी मौजूद है । हल्की-सी आहट भी न केवल शंका का बल्कि विपदा का भी कारण बन सकती है । अभी हमारी विजय अधूरी है और जब तक नागवर्मा स्वतंत्र और जीवित है, तब तक यह अधूरी ही रहेगी । हमें अपनी जीत को पूर्ण बनाने के लिए बहुत सावधानी बरतनी है । सैनिकों को अलग-अलग स्थानों पर छिपा देना है । जब नागवर्मा निश्चिंत होकर दुर्ग में प्रवेश करे, तब अचानक उस पर हमला करना होगा और जीवित या मृत उसे
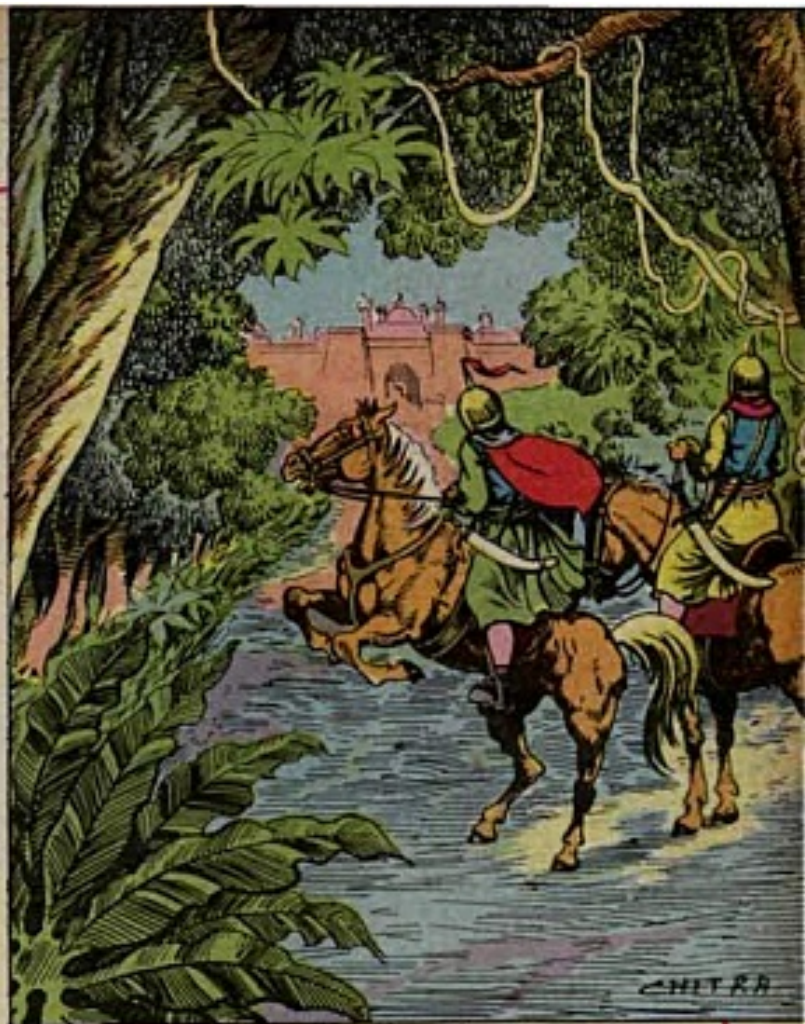
पकड़ना होगा ।" चित्रसेन ने कहा ।

"हाँ, महाराज! यह काम मुझे तथा अमरपाल को सौंप दीजिए! आप, महाराजा वीरसिंह एवं राजकुमारी महल के किसी गुप्त स्थान में रहकर मेरे साहस और पराक्रम का प्रदर्शन देखें!" यह कहकर उग्राक्ष ने अपने सैनिकों को आवाज़ लगायी ।

अमरपाल और उग्राक्ष के नेतृत्व में सैनिक तथा राक्षस-दल के लोग दुर्ग के भीतर के भवनों में एवं वृक्षों की ओट में छिप गये । तभी नागवर्मा ने दुर्ग के समीप के जंगल में प्रवेश किया । घोड़े पर से ही दुर्ग की बुर्जों की ओर दृष्टि दौड़ाकर वह बोला, "करवीर, हमने जो सोचा था, वह सच निकला । दुश्मन ने दुर्ग पर धावा बोलकर, देखो, उसकी क्या दशा बना दी है और अब वह

कहीं भाग निकला है!"

करवीर ज्वालाद्वीप के बाघचर्मधारियों का सरदार था। वह भी अपने अनुचरों के साथ नागवर्मा के पक्ष में मिल गया था और धवल़गिरि पर आक्रमण करने के लिए उसके साथ गया था। वहाँ इन लोगों को महाराजा तारकेश्वर के हाथों मुँह की खानी पड़ी। मार खाकर अब ये कपिलपुर के दुर्ग की तरफ़ भागे चले आरहे थे।

करवीर बोला, "जी हाँ, महाराज! आपका कहना सच है। ऐसा लगता है कि हमारे शत्रु ने दुर्ग पर रक्षा के लिए छोड़े गये सैनिकों को मारकर दुर्ग पर अधिकार कर लिया है। पर ऐसा मालूम होता है कि इस समय दुर्ग में एक भी प्राणी नहीं है। शत्रु सारे दुर्ग में लूट-पाट करके चित्रसेन की राजधानी को लौट गया लगता है। सबसे बडे आश्चर्य की बात तो यह है कि मेरे दो बाघचर्मधारी अनुचर उन दो भयंकर पक्षियों के साथ कहीं दिखाई नहीं दे रहे हैं।"

"मुझे तो एक और बात की आशंका है! दुर्ग की काल-कोठरी में बन्दी बनाकर रखे गये बूढ़े राजा वीरसिंह तो कहीं शत्रु के हाथ में नहीं पड़ गये? अगर ऐसा हुआ होगा तो भविष्य में हमें भयंकर ख़तरों का सामना करना पड़ेगा। पहले कि राजा तारकेश्वर की सेनाएँ यहाँ पहुँचे, हमें दुर्ग में अपने को सुरक्षित कर लेना चाहिए। दुर्ग की रक्षा का समुचित प्रबन्ध तत्काल होना चाहिए। अगर हम दुर्ग की दीवारों की मरम्मत कर लेते हैं, तो हम बहुत समय तक दुश्मन का सामना कर सकेंगे।" नागवर्मा ने कहा।

इसके बाद नागवर्मा और करवीर ने अपने अनुचरों को सावधान करते हुए कहा, "दुश्मन हमारा पीछा करता आ रहा है। उन असंख्य सैनिकों के हाथों में पड़ने से बचने में कपिलपुर का दुर्ग ही केवल हमारी रक्षा कर सकता है। इसलिए तुम लोग जल्दी निकलो।"

इसके बाद नागवर्मा और करवीर घोड़ों पर पहले निकल पड़े। उनके पीछे पैदल सेना और उनके पीछे कुछ घुड़सवार चल पड़े। आधी घड़ी में ये सब लोग दुर्ग की दीवारों के सामने के मैदान में पहुँच गये। तब नागवर्मा तथा करवीर ने अपनी सेनाओं को रुक जाने का आदेश दिया। वे दुर्ग के टूटे हुए द्वारों के पास गये और भीतर झाँक कर देखने लगे। दुर्ग के अन्दर घोर सन्नाटा

CHITRA
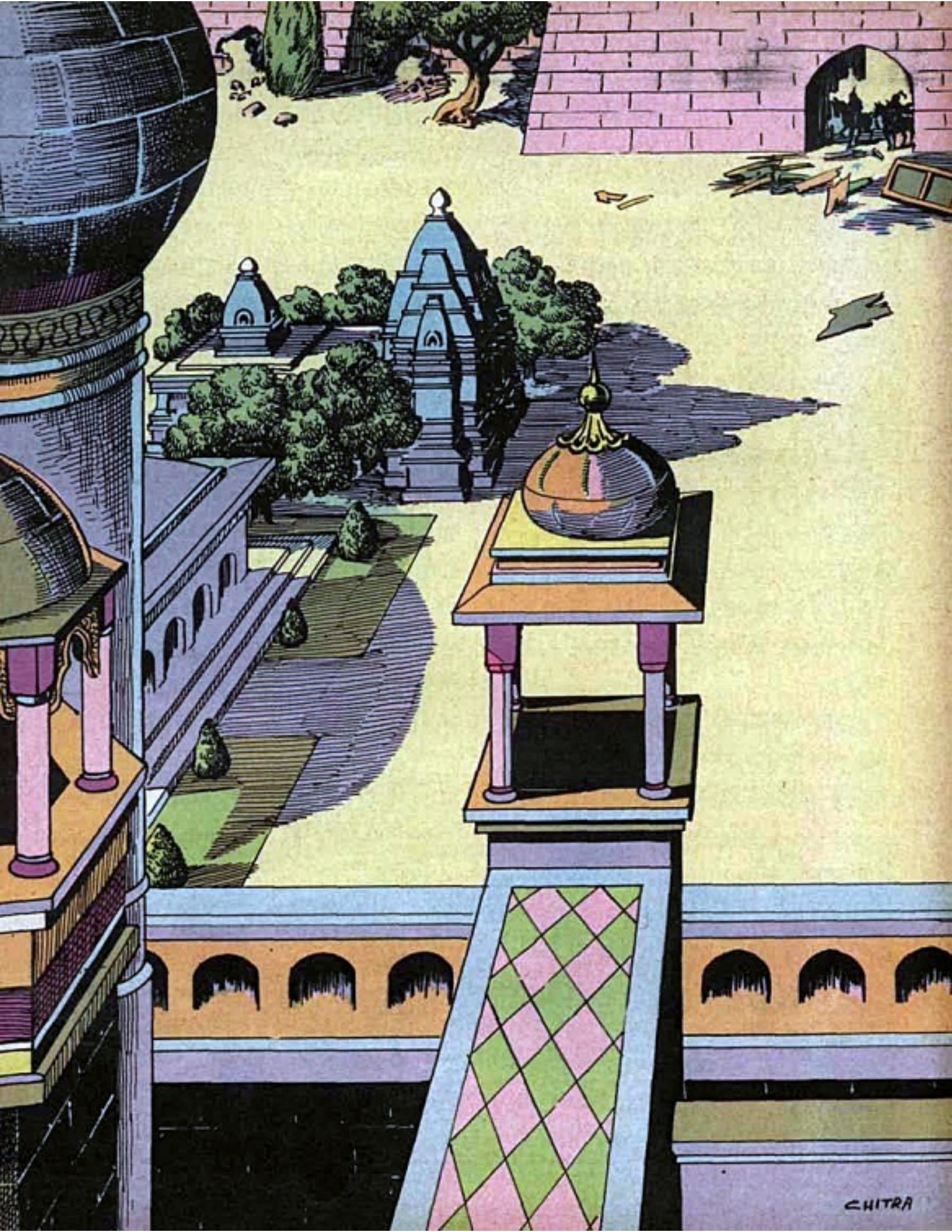
छाया हुआ था। सब जगह ऐसी ख़ामोशी थी कि सुई भी गिरे तो उसकी आवाज़ सुनाई दे।

"करवीर, इसमें कोई धोखा-दग़ा तो नहीं है न?" नागवर्मा ने कहा।

"धोखा क्या है? दुर्ग में जो भी धन-संपदा थी, दुश्मन सब लूटकर चला गया है। उन्हें बूढ़े राजा वीरसिंह की ज़रूरत थी, सो वे भी उनके हाथों में आगये होंगे।" करवीर ने कहा।

"हमारे जो सैनिक युद्ध में काम आये होंगे, उनके शव कहीं दिखा नहीं दे रहे हैं। उनकी लाशें कहाँ गायब होगयीं? कहीं उग्राक्ष तो अपने राक्षस अनुचरों के साथ यहाँ नहीं आया था?" नागवर्मा ने जानना चाहा।

नागवर्मा की बातें सुनकर बाघचर्मधारियों का नेता करवीर भी काँप उठा। वह उग्राक्ष और उसके राक्षसों के नाम से ही थर-थर काँप उठता था।

उसने नागवर्मा की ओर अपना घोड़ा बढ़ाया, फिर उसकी तरफ़ झुककर कोई रहस्य बताने की मुद्रा में बोला, "महाराज, भविष्य को दृष्टि में रखकर हम एक काम करेंगे।"

"क्या है वह काम?" नागवर्मा ने शंकित मन से पूछा।

"दुर्ग में सर्वत्र शांति छायी हुई है और कहीं एक मानव प्राणी नज़र नहीं आ रहा। मुझे तो आश्चर्य नहीं, बल्कि पूरा संदेह है कि कहीं उग्राक्ष अपने राक्षसों के साथ हमारी ताक में न बैठा हो। एक तरफ़ तो यह भय है, दूसरी तरफ़ इस दुर्ग पर कब्ज़ा किये बिना इसे छोड़ जाना भी इसलिए बुद्धिमानी नहीं है क्योंकि यही दुर्ग हमारी रक्षा कर सकता है। हमारा जाना और रहना दोनों ही ख़तरे से ख़ाली नहीं है। हमारा पीछा कर रहे राजा तारकेश्वर के सैनिक इस जंगल में इस तरह हमें अपना शिकार बनायेंगे, जैसे जानवरों को घेरकर उन्हें शिकार बनाया जाता है। हमें दुर्ग में प्रवेश करने से पहले एक काम करना चाहिए। अपने सैनिकों को भेजकर सारी वस्तुस्थिति का पता लगाना चाहिए। फिर अगर कोई ख़तरा न हो तो हम पीछे से दुर्ग में घुस सकते हैं।" करवीर ने सुझाव दिया। (क्रमशः)

तीन व्यापारी

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये। पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाला और हमेशा की तरह श्मशान की ओर चलने लगे। तब शव में वास करनेवाले बेताल ने पूछा, "राजन, आधीरात के समय इस अत्यन्त भयानक श्मशान में आप जो श्रम उठा रहे हैं, उसे देखकर मेरे मन में यह शंका होती है कि आप जिस महान कार्य की सिद्धि करना चाहते हैं, उसमें भाग लेनेवाला कोई न कोई मित्र अवश्य होना चाहिए। यदि ऐसा न होता तो अकेले आप इतना कष्ट नहीं झेल सकते थे। लेकिन कार्य साधते समय मित्र के साथ जो प्रतिज्ञा की गयी है, क्या कार्य सिद्ध होने के बाद उसकी रक्षा हो सकेगी? यह सत्य अकाट्य है कि मानव का मन चंचल होता है और वह पूरा लाभ स्वयं ले लेने के लिए अपने वचन को भी तोड़ डालता है। इसके उदाहरण रूप में मैं आपको तीन व्यापारियों की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल कथा
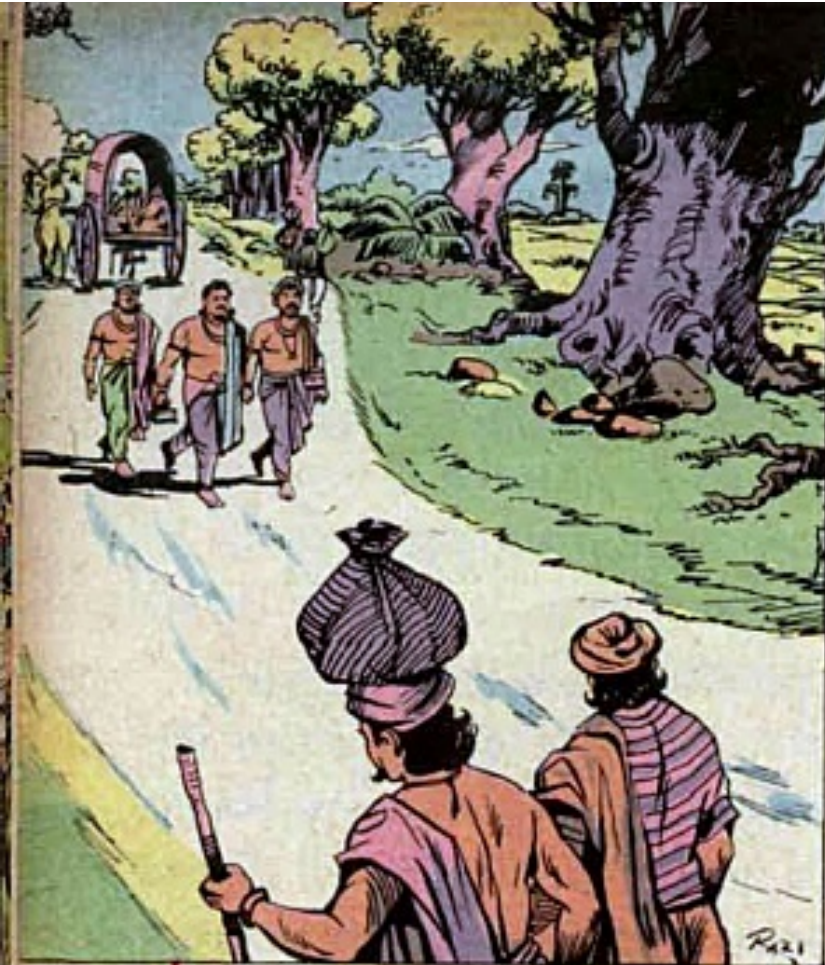
बेताल कहानी सुनाने लगाः

प्राचीन नगर प्रतिष्ठानपुर में जयेंद्र, सोमेंद्र तथा शिवदास नाम के तीन मित्र रहते थे.। वे तीनों ही समवयस्क थे और हँसी में एक-दूसरे को 'जिज्जा' 'जिज्जा' कहकर पुकारा करते थे । ये तीनों ही अच्छे व्यापारी थे और माल की ख़रीद-बेच के द्वारा तीनों ने ही अच्छा धन कमाया था। तीनों के बीच सौहार्द्रता थी इसलिए व्यापार के काम से जब दूसरे शहरों या देशों में जाना पड़ता तो वे तीनों मिलकर ही जाते ।

एक बार इन तीनों मित्रों ने प्रतिष्ठानपुर की हीरे की ख़दानों से प्राप्त हीरों को ख़रीदा और वहाँ से सिंहपुर नाम के एक प्रसिद्ध नगर की ओर प्रस्थान किया। प्रतिष्ठानपुर से सिंहपुर के बीच की यात्रा बहुत आसान नहीं थी। मार्ग तो बहुत लम्बा था ही, लेकिन एक बन को भी पार करना पड़ता था । एक ओर चोर-डाकुओं का ख़तरा था तो दूसरी ओर बनैले पशुओं का भी । इस बार जब व्यापार का काम समाप्त हुआ तो दो महीने के प्रवास के बाद केवल जयेंद्र और सोमेंद्र ही प्रतिष्ठानपुर लौटे। वे उदास चेहरे लेकर शिवदास की पत्नी के पास पहुँचे और बोले, "रमा बहन, गज़ब होगया। जब हम सिंहपुर से लौट रहे थे तो हमें एक रात एक बन में विश्राम करना पड़ा। हम लेटे हुए थे कि एक बाघ आया और शिवदास को अपने मुँह में दबाकर भाग गया। उसके बाद क्या हुआ, हमें नहीं मालूम! बहन, एक बात और भी है। शिवदास ने हमें बताया था कि उसने अपने हीरे सिंहपुर के किसी व्यापारी को उधार दिये हैं, ताकि वह उन्हें जावा, सुमात्रा, बाली द्वीपों में बेच आये। अब तो अगले वर्ष ही वह धन वसूल हो सकेगा ।"

शिवदास की पत्नी रमा अपने पति की मृत्यु का समाचार पाकर विलाप करने लगी । जयेंद्र और सोमेंद्र ने उसे धीरज बंधाया और कहा, "बहन, तुम्हारे तीन बच्चे हैं । तुम इनकी तरफ़ ध्यान दो! अब दुखी होने से तो कुछ हाथ आयेगा नहीं । शिवदास के हाथ से जिस व्यापारी ने हीरे लिये हैं, वह निश्चय ही तीन महीनों में उन द्वीपों से लौट आयेगा। उसके कुछ समय बाद हम उससे मिलकर तुम्हारे पति का धन वसूल करेंगे। तुम निश्चिंत रहो ।"

जयेंद्र के कोई पुत्र न था। शोभा नाम की एक पुत्री थी। सोमेंद्र के शलभ नाम का एक पुत्र था वह बीस वर्ष का एक नीतिवान युवक था और अपने पिता के पास व्यापार के तौर-तरीकों को सीख रहा था।

अभी कुछ ही दिन बीते थे कि अचानक सोमेंद्र अस्वस्थ रहने लगा। पिता की दुर्बल हालत देख शलभ ने व्यापार का अधिकांश भार अपने ऊपर ले लिया।वह रात-दिन मेहनत करता और पिता की सेवा में भी किसी प्रकार की असावधानी न दिखाता। सोमेंद्र धीरे-धीरे चलता-फिरता, बोलता-चालता था, पर उसकी दुर्बलता बढ़ती जारही थी।

कुछ समय और बीता। सोमेंद्र की हालत बहुत अधिक ख़राब होगयी और उसने खाट पकड़ ली।

एक दिन सोमेंद्र ने अपने बेटे शलभ को पास बुलाकर कुछ कहने का प्रयत्न किया। वह बड़ी कठिनाई से केवल इतना ही बोल सका, "बेटा, जयेंद्र से हमें आधा मिलना है।" कुछ देर बेहोशी में उसकी आँखें मुंदी रहीं—थोड़ी देर बाद उसने आँखें खोलीं और टूटती हुई आवाज़ में शलभ को कुछ और बातें बताकर वह सदा के लिए शान्त होगया।

सोमेंद्र ने अंतिम समय में अपने बेटे शलभ से टूटे-फूटे शब्दों में जो कुछ कहा था, शलभ ने उसका यह अर्थ समझा—"जयेंद्र से जो धन मिलेगा, उसे शिवदास की पत्नी रमा को देना है।" शलभ ने अपने पिता को वचन दिया था कि वह अवश्य ही उसके आदेश का पालन करेगा।

शलभ ने बड़ी श्रद्धा-भक्ति के साथ विधिपूर्वक अपने पिता का अंतिम संस्कार संपन्न किया। प्रतिष्ठानपुर में शलभ के गुणों की पहले ही चर्चा होती थी, अब तो लोग उसे और भी अधिक आदर देने लगे। सब सोमेंद्र का भाग्य सराहते कि उसे इतना लायक़ पुत्र मिला था। इसके बाद एक दिन शलभ जयेंद्र से मिला और बोला, "मामाजी, क्या आपसे मेरे पिता को कुछ धन मिलना है? मैं यह बात इसलिए पूछ रहा हूँ क्योंकि उन्होंने मरने से पहले मुझे आदेश दिया था कि आपसे हमें जो धन मिलना है, वह मैं लेकर शिवदास की पत्नी को सौंप दूँ।"

जयेंद्र ने कुछ क्षण रुककर फिर पूछा, "शलभ, तुम यह बताओ, तुम्हारे पिता ने तुमसे जो कुछ कहा था, क्या तुमने उसे साफ़-साफ़ सुना था?''

"यह तो मैं नहीं कह सकता। पर मरते वक़्त मेरे पिताजी ने क्षीण स्वर में जो कुछ भी कहा था, उसका अर्थ मैंने यही लगाया। हो सकता है मुझे भूल हुई हो!'' शलभ ने कहा।

इस विषय की चर्चा यहीं समाप्त होगयी। शलभ ने व्यापार में अपना मन लगाया और यथाशक्ति शिवदास के परिवार की मदद करने लगा। शलभ देखने में भी स्वरूपवान था और कर्त्तव्य में कुशल। उसके लिए शब्द का बहुत मूल्य था और वह अपने वचन को कभी नहीं भूलता था।

शलभ की बात पर जयेंद्र खीज उठा, बोला, "मेरे पास तुम्हारे पिता का कर्ज के रूप में एक छदाम भी नहीं है। अगर होता तो क्या वह जीते जी इसे वसूल न कर सकता था। मरते समय अटकती हुई ज़ुबान में तुमसे कुछ भी कहने का मतलब भला क्या हो सकता है? अवश्य ही तुम्हें कोई गलतफ़हमी हुई है। इतना अवश्य है कि यात्रा के समय सरायों में, नाविकों को, कुलियों को प्रायः सोमेंद्र ही पैसा दिया करता था। कभी-कभी मैं भी देता था। पर हम लोग बराबर का खर्च करना ही पसन्द करते थे। फिर भी, अगर तुम्हारे पिता के कुछ अधिक पैसे खर्च होगये हों और उन्होंने तुमसे उन बचे हुए पैसों को शिवदास की पत्नी को सौंप देने की बात कही हो, तो यह हमारे लिए प्रतिष्ठा की बात नहीं होगी।''

छह माह व्यतीत होगये। जयेंद्र व्यापार के काम से हमेशा की तरह सिंहपुर जाने की तैयारी करने लगा। शलभ भी अपने पिता के समान उसके साथ चल पड़ा। उन दोनों के पास क़ीमती हीरे थे।

इस यात्रा में आगे बढ़ने पर एक दिन वे एक बन में पहुँचे। उस रात ज्योतिप्रेम नाम के एक साधु ने उन्हें आतिथ्य दिया। वहाँ ये महात्मा और उनके शिष्य रुग्ण लोगों की सेवा में लगे थे। जयेंद्र और शलभ ने परोपकार में लगे इन महात्मा को रोगपीड़ितों की मदद के लिए कुछ धन दिया।

इसके बाद उन्होंने नदी में नाव द्वारा यात्रा की और लगभग पंद्रह दिन बाद सिंहपुर पहुँचे।

वहाँ जयेंद्र और शलभ दोनों एक सराय में ठहर गये ।

दूसरे दिन वे दोनों अपने हीरे बेचने के लिए नगर के दो अलग-अलग भागों में गये । सिंहपुर में पड़ोसी राजा महेंद्रसिंह का एक महल भी था । शलभ ने उस राजा के पास जाकर अपने हीरे दिखलाये ।

राजा ने शलभ का पता पूछा, फिर विस्मित होकर कहा, "पिछले वर्ष जब मैं इस नगर में था, तब प्रतिष्ठानपुर से हीरे का एक व्यापारी आया था। उसके पास एक अत्यन्त क़ीमती हीरा था । ऐसा हीरा उससे पहले मैंने कहीं नहीं देखा था । अधिक मूल्य चुकाकर मैंने उसे ख़रीद लिया था ।"

इसके बाद शलभ राजा महेंद्रसिंह को कुछ हीरे बेचकर सराय में लौट आया। उसके हृदय में कोई शंका घर कर गयी थी । एक सवाल था जो उसके हृदय को मथ रहा था । वह जितना सोचता, उतना ही उलझ जाता । शिवदास की मृत्यु और उसका धन, उसके अपने पिता के अन्तिम शब्द— सब में वह तालमेल नहीं बिठा पा रहा था । आख़िर जब जयेंद्र थोड़ी देर बाद सराय में लौटा, तब शलभ ने उससे पूछा, "मामाजी, क्या आपने पिछले वर्ष राजा महेंद्रसिंह को कोई बहुमूल्य हीरा बेचा था ?"

"नहीं, मैंने तो नहीं बेचा । पर तुम्हारे इस सवाल का मतलब क्या है ?" जयेंद्र ने पुछा ।

"मैंने उनके हाथ कुछ हीरे बेचे हैं । वे बहुत ही सज्जन पुरुष हैं ।" शलभ ने बात वहीं समाप्त कर दी ।

दूसरे शलभ ने जयेंद्र से कहा, "मामाजी, शिवदास मामा ने कुछ हीरे यहाँ के किसी व्यापारी को दिये थे न ? हम कल पता लगायेंगे कि वह जावा, सुमात्रा और बाली द्वीपों से लौट आया है या नहीं । हमें मामाजी के धन की वसूली भी तो करनी है! आपने और पिताजी ने रमा मामी को वचन दिया था न कि उस व्यापारी से पैसा वसूल करके आप उन्हें दे देंगे । अब वह काम कर देना चाहिए ।"

जयेंद्र बोला, "बेटा, मैंने उस व्यापारी के सम्बन्ध में पूछताछ की तो मुझे पता लगा कि जावा, सुमात्रा गये सभी व्यापारियों का बहुत नुकसान होगया है। शायद अब वे वापस भी न

आयें। वास्तव में शिवदास को इस तरह विश्वास करके उस व्यापारी को हीरे नहीं देने चाहिए थे।" जयेंद्र ने सारा दोष शिवदास पर डालकर अपने को मुक्त कर लेना चाहा, पर शलभ के प्रश्नों से और उसकी कुशाग्रता से वह सहज नहीं हो पा रहा था। थोड़ी-सी घबराहट उसके अन्दर प्रवेश कर गयी थी।

अब उन दोनों की वापसी यात्रा शुरू हुई। वे दोनों उसी बन में पहुँचे, जहाँ महात्मा ज्योतिप्रेम का आश्रम था।

दूसरे दिन जयेंद्र ने शलभ से कहा, "बेटा, इस प्रदेश में एक उजाड़ मंदिर है। वहाँ पिछली बार मैंने एक मनौती मानी थी। अब उस मनौती की भेंट वहाँ देनी है। इसलिए मुझे अकेले ही पैदल चलकर वहाँ जाना होगा।" यह कहकर जयेंद्र आश्रम से निकल पड़ा।

शलभ को मनौती की बात कुछ अविश्वसनीय-सी लगी। इस मनौती के बारे में पहले कभी तो जयेंद्र ने कोई जिक्र नहीं किया था। अब अचानक बीच जंगल में मनौती की बात कहाँ से आगयी? सच बात का पता लगाने के लिए वह गुप्त रूप से जयेंद्र का अनुसरण करने लगा।

जयेंद्र एक टीले के पास पहुँचा। वहाँ उसने एक गड्ढे पर ढँके पत्थर को खींचा और चीख कर नीचे गिर पड़ा। शलभ ने देखा, एक बहुत बड़ा सर्प फण फैलाकर फूत्कार कर रहा है। कुछ ही क्षणों में वह भयंकर नाग समीप की शिलाओं की ओट में चला गया।

जयेंद्र पीड़ा के मारे छटपटा हुआ और कलपने लगा, "मुझे प्यास लगी है, प्यास...प्यास!" शलभ दौड़कर गया और पत्थरों के बीच बह रहे सोते से पत्ते के दोने में पानी भर लाया। उसने जयेंद्र को पानी पिलाया। जयेंद्र की आँखें मुंदती जा रही थीं। उसके मुँह से बोल नहीं फूट रहे थे। ऐसी हालत में उसने शलभ से कहा, "बेटा, यह महापापी मौत के मुँह में जा रहा है। उस गड्ढे में धन है, उसे तुम लेजाओ!" फिर कुछ रुककर हाँफते हुए बोला, "बेटा, मुझे सारी चिन्ता अपनी जवान हुई बेटी शोभा के लिए है। यह धन...यह धन..." फिर इसके बाद वह कुछ बोल नहीं सका।

शलभ ने जयेंद्र के दोनों हाथ पकड़ लिये और कहा, "मामाजी, आप चिन्ता न करें! मैं

आपको वचन देता हूँ कि शोभा का विवाह किसी योग्य वर के साथ अवश्य कर दूँगा ।''

यह उत्तर पाकर जयेंद्र के चेहरे पर शांति छागयी । दूसरे ही क्षण उसने प्राण छोड़ दिये ।

शलभ ने आश्रम लौटकर महात्मा ज्योतिप्रेम को जयेंद्र की मृत्यु का समाचार सुनाया । ज्योतिप्रेम ने अपने शिष्यों के द्वारा जयेंद्र का अंतिम संस्कार संपन्न कराया ।

शलभ ने महात्मा ज्योतिप्रेम को टीले के पास गड़े धन का पता दिया और उनसे निवेदन किया, ''स्वामीजी, आप उस धन को अपनी इच्छानुसार परोपकार के कार्यों में लगाइयेगा ।''

इसके बाद शलभ जयेंद्र के धन और उसकी अन्य वस्तुओं के साथ प्रतिष्ठानपुर लौट आया । उसने वह सब कुछ जयेंद्र के परिवार को सौंप दिया । इसके अलावा उसने व्यापार में जो लाभ प्राप्त किया था, उसमें से आधा धन शिवदास की पत्नी रमा को देकर सारा वृतान्त सुनाया और कहा ''मामी मैं आगे भी आपके परिवार की उचित देखभाल करता रहूँगा । जो मैं जानता था, वह मैंने आपको बता दिया । जो मुझे करने योग्य लगा, वह मैं कर रहा हूँ । आशा है आप मुझ पर विश्वास करेंगी ।''

कुछ दिन बाद शलभ ने अपने एक रिश्तेदार के द्वारा जयेंद्र की पत्नी प्रेमलता के पास शोभा के साथ विवाह का प्रस्ताव भेजा । यह प्रस्ताव सुनकर प्रेमलता फूली न समायी ।

एक वर्ष बाद जयेंद्र की पुत्री शोभा के साथ शलभ का विवाह होगया । शलभ ने व्यापार में भी बहुत धन कमाया ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा, ''राजन, क्या शलभ का यह व्यवहार सन्देहास्पद नहीं है? जयेंद्र ने जो धन ज़मीन में गाड़ रखा था, उसे उसने जयेंद्र के परिवार को न सौंपकर साधु को दे दिया । और स्वयं जो धन कमाया था, उसका आधा भाग शिवदास की पत्नी को सौंप दिया । ऐसा उसने क्यों किया? अगर आप इस सन्देह का समाधान जानकर भी न करेंगे, तो आपका सिर फूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा ।''

विक्रमार्क ने उत्तर दिया, ''शिवदास ने एक व्यापारी को अपने हीरे जावा, सुमात्रा एवं बाली द्वीप में बेचने के लिए दिये हैं, शलभ इस कथा को सत्य नहीं, कल्पित समझता है । राजा

महेंद्रसिंह से मिलने के बाद शलभ को यह विश्वास हो जाता है कि शिवदास ने अपने हीरों को उनके हाथ बेचा था और अच्छा मूल्य प्राप्त किया था। वापसी यात्रा में शिवदास की मृत्यु कैसे हुई, यह वह नहीं जान पाता। पर उसे यह संभावना दिखाई देती है कि टीले के पास गड़ा हुआ धन शिवदास का है। शिवदास की आकस्मिक मृत्यु के बाद उसका धन जयेंद्र और सोमेंद्र को मिला होगा, पर इन दोनों ने उस धन को साथ ले जाना ठीक न समझा होगा। इनका यह भी विचार रहा होगा कि अगर इनके धन को रास्ते में चोर-डाकुओं ने लूट लिया तो गाड़कर रखा हुआ धन इन्हें बाद में सुरक्षित मिल जायेगा। जयेंद्र और सोमेंद्र की यह योजना भी हो सकती है कि बाद में ये दोनों उस धन को आपस में बाँट लेंगे। सोमेंद्र ने मरते समय संभवतःइस गड़े हुए धन में से अपना हिस्सा शिवदास की पत्नी को सौंपने का आदेश शलभ को दिया था।

शलभ ने सारी बातों को पूरी तरह हृदयंगम कर लिया था। जयेंद्र ने टीले के पास गड़े हुए पूरे धन को स्वयं हथियाने की कोशिश की, पर मौत ने उसे धर दबोचा। इसके बाद शलभ ने वही व्यवहार किया जो एक न्याय शील, विवेकशील व्यक्ति को करना चाहिए। उसने गाड़े गये धन को इसलिए नहीं लिया, क्योंकि उसे स्पष्ट पता न था कि वह धन किसका है और न्यायोचित मार्ग से कमाया गया है अथवा अन्यायपूर्वक! इसीलिए वह उस धन को परोपकारी महात्मा ज्योतिप्रेम को दे देता है। इसके अलावा उसने अपने पिता के अंतिम आदेश का भी पालन किया और अपने धन में से आधा हिस्सा शिवदास की पत्नी को दे दिया। जयेंद्र को मृत्यु के समय दिये वचन का पालन भी शलभ ने किया और उसकी पुत्री शोभा के साथ विवाह कर लिया। इन सब कारणों से स्पष्ट हो जाता है कि शलभ एक असाधारण नीतिवान एवं दानशील युवक है। उसके व्यवहार में सन्देह की कोई कालिमा नहीं है।''

राजा के इस प्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

हमारे देश के आश्चर्य

गोलकोंडा का क़िला
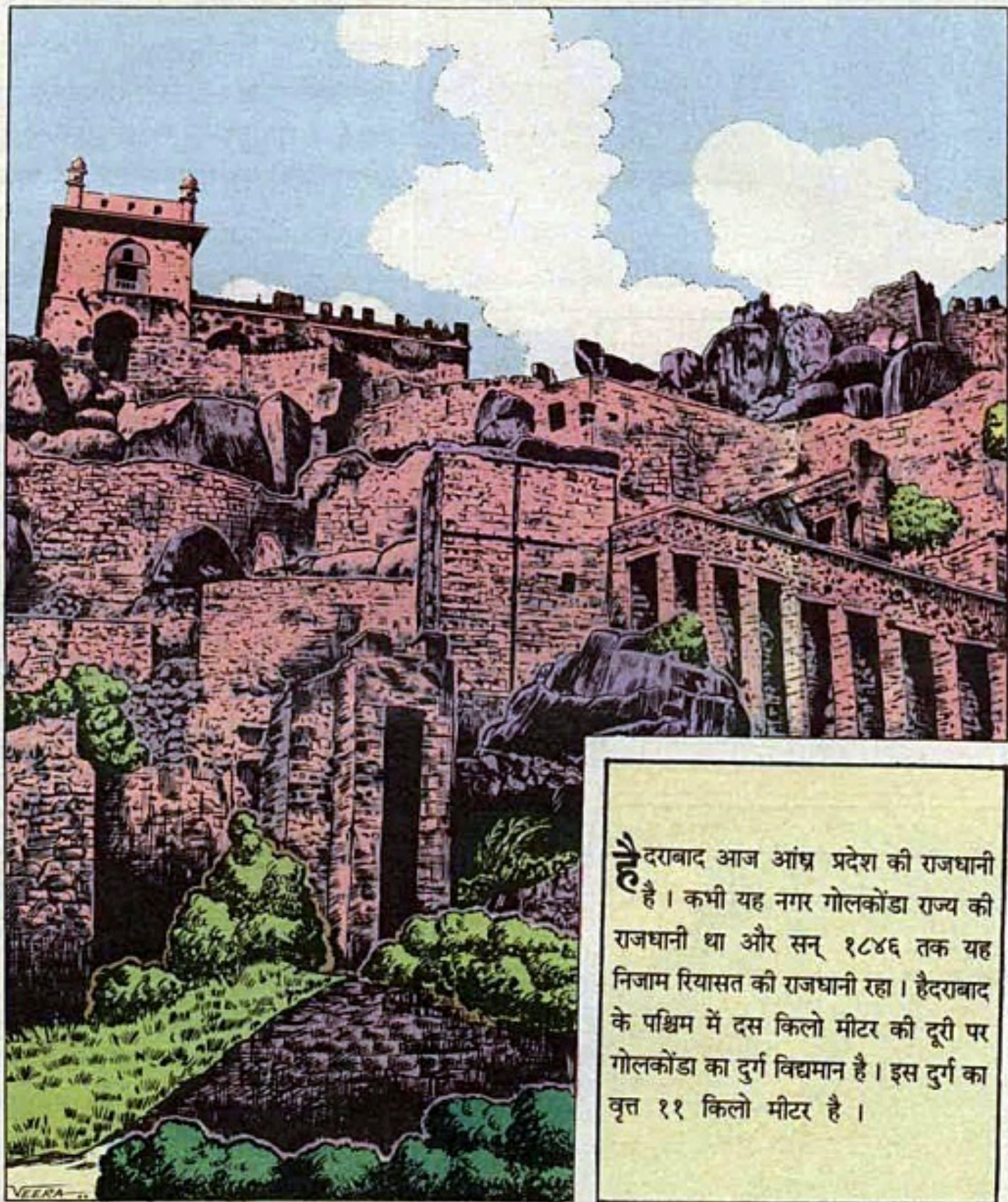
हैदराबाद आज आंध्र प्रदेश की राजधानी है। कभी यह नगर गोलकोंडा राज्य की राजधानी था और सन् १८४६ तक यह निजाम रियासत की राजधानी रहा। हैदराबाद के पश्चिम में दस किलो मीटर की दूरी पर गोलकोंडा का दुर्ग विद्यमान है। इस दुर्ग का वृत्त ११ किलो मीटर है।

सुलतान कुली कुतुबशाह नाम के तुर्की नवाब ने सन् १५१८ में इस स्थान को देखकर यहाँ अपनी राजधानी बनाने का संकल्प किया था। धीरे-धीरे दुर्ग का निर्माण हुआ। इस दुर्ग से शासन करने वाले सुलतानों को कुतुबशाही पुकारा जाता था।

गोलकोंडा दुर्ग की कई विशेषताएँ हैं। प्रवेश-द्वार के पास अगर ताली बजायी जाये, तो उसकी ध्वनि ६१ मीटर ऊँची क़िले की बुर्ज पर सुनाई देती है। कहा जाता है कि दीवारों में अत्यन्त नाजुक स्फटिकों को बिठाने के कारण यह क्रिया घटित होती है।
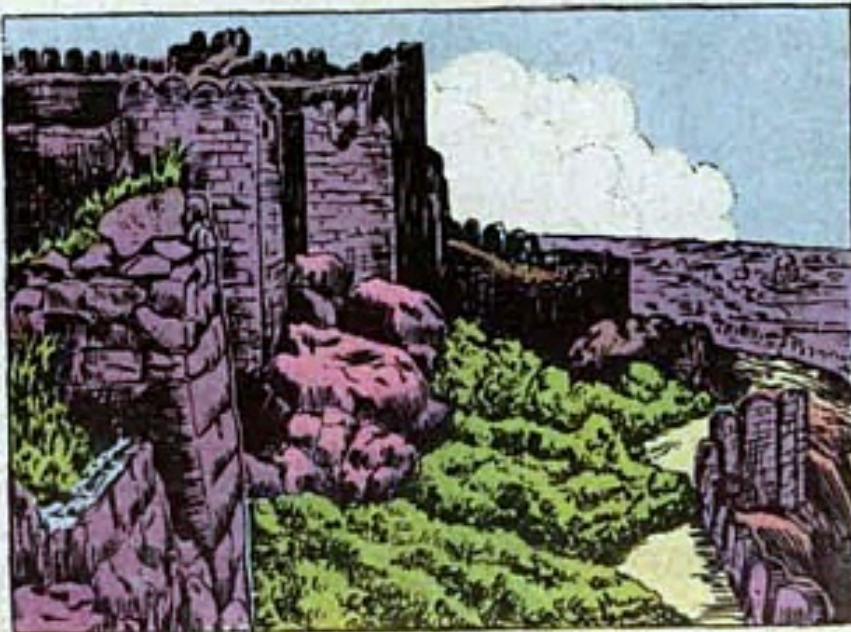
गोलकोंडा दुर्ग के चारों ओर जो चहारदीवारी है, उसमें आठ द्वार और सत्तर बुर्ज हैं। शत्रुसेना को दुर्ग में प्रवेश करने से रोकने के लिए बड़े अद्भुत ढ़ग से इस चहारदारी का निर्माण हुआ है।

दुर्ग की बुर्जियाँ बहुत दूर तक दिखाई देती हैं। जहाँ शासक निवास करते थे, पहाड़ के उस अद्‌भुत भवन तक पहुँचने के लिए काफ़ी कठिन मार्ग तय करना पड़ता है ।
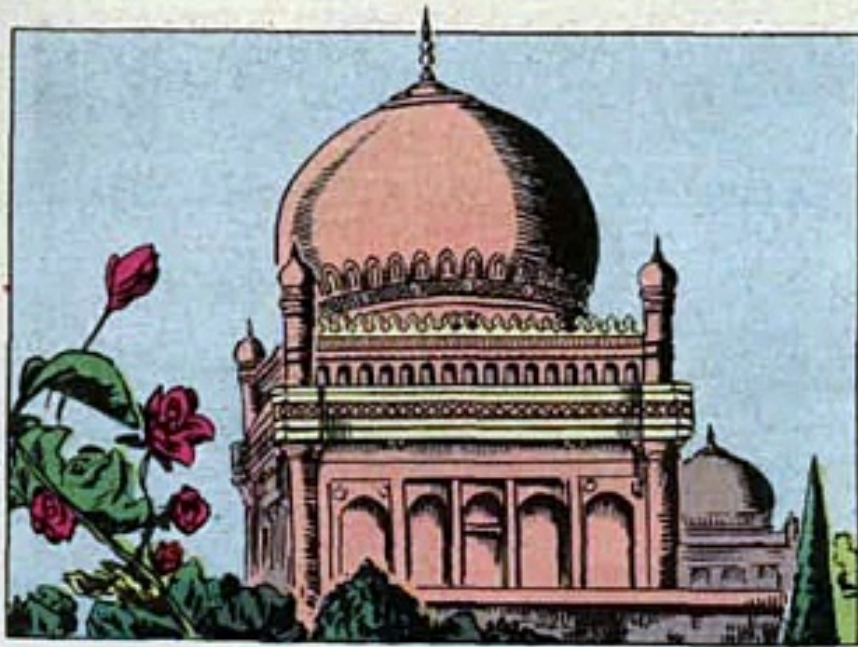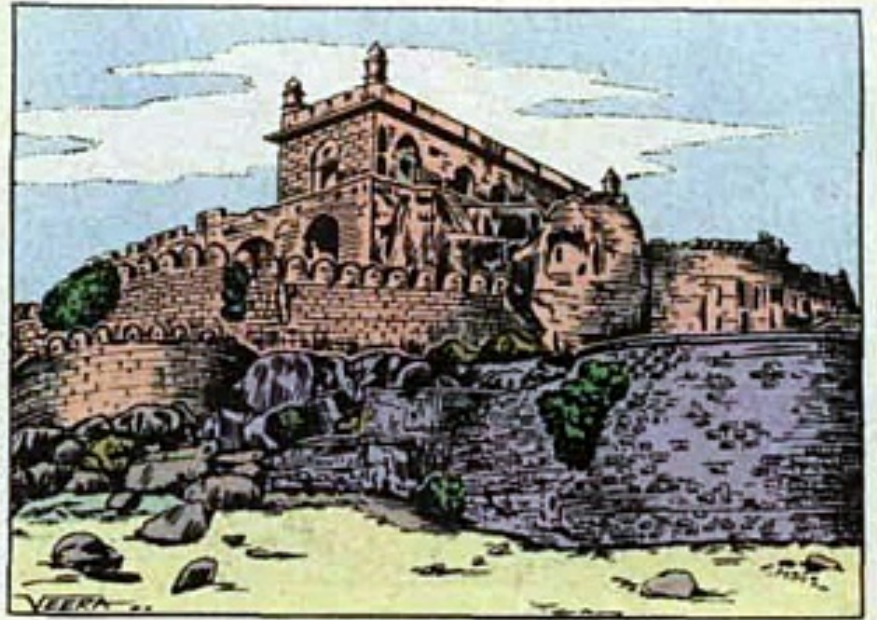
दुर्ग के समीप कुतुबशाही शासकों की कुछ मसज़िदें हैं। इनके नुकीले द्वार हैं और गोपुरों से पर्यवेष्टित हैं तथा इनका निर्माण चतुरस्त्र आधार-पीठ के साथ किया गया है । इस्लामी धार्मिक विशेषताओं के अलावा यहाँ हिन्दू धर्म के प्रतीक-चिन्ह कमल-पुष्प एवं पत्रों को भी अंकित किया गया है । यह यहाँ की एक विलक्षणता है, जिसकी ओर सबका ध्यान जाता है ।

गोलकोंडा का राज्य सन्‌ १६८७ तक एक स्वतंत्र राज्य के रूप में विख्यात था । इसी समय औरंगज़ेब ने बड़ी भारी सेना लेकर इस दुर्ग की तरफ प्रयाण किया ।

इस क़िले पर अधिकार करने के लिए उसने इसे घेर लिया। दोनों सेनाओं के बीच भयंकर युद्ध हुआ। कुतुबशाही सुलतानों की सेना हार गयी। औरंगज़ेब ने गोलकोंडा दुर्ग को मुग़ल साम्राज्य में मिला लिया।

गोलकोंडा की हीरों की ख़दानों से विश्व-विख्यात हीरे प्राप्त हुए हैं। 'महामुग़ल' नामक हीरा सन् १६५० में प्राप्त हुआ था, जिसेऔरंगज़ेब अपने साथ ले गया था। इंगलैंड में अब राजवंश की संपत्ति के रूप में सुरक्षित और भारत से ले जाया गया कोहनूर हीरा भी गोलकोंडा से प्राप्त हुआ था।
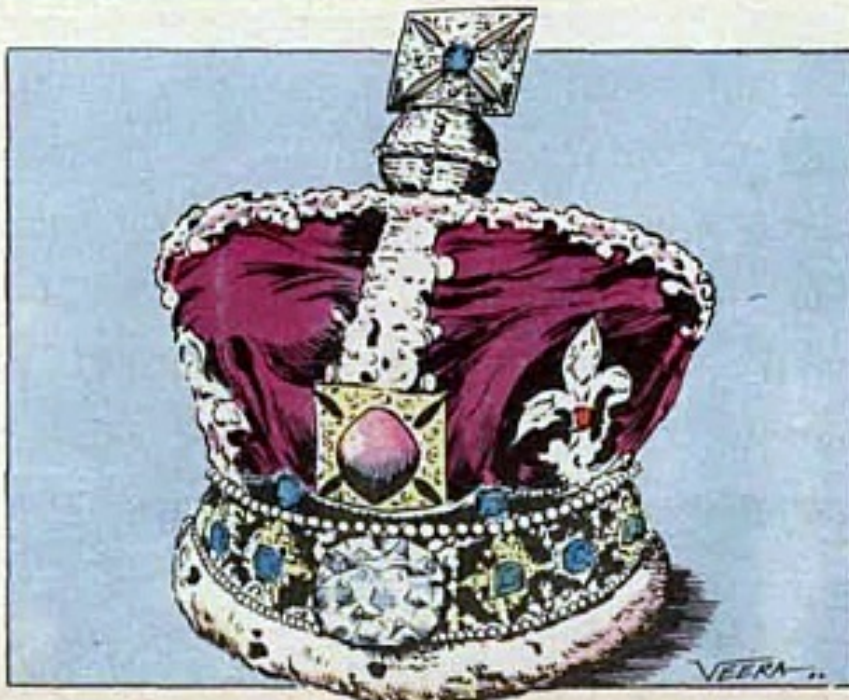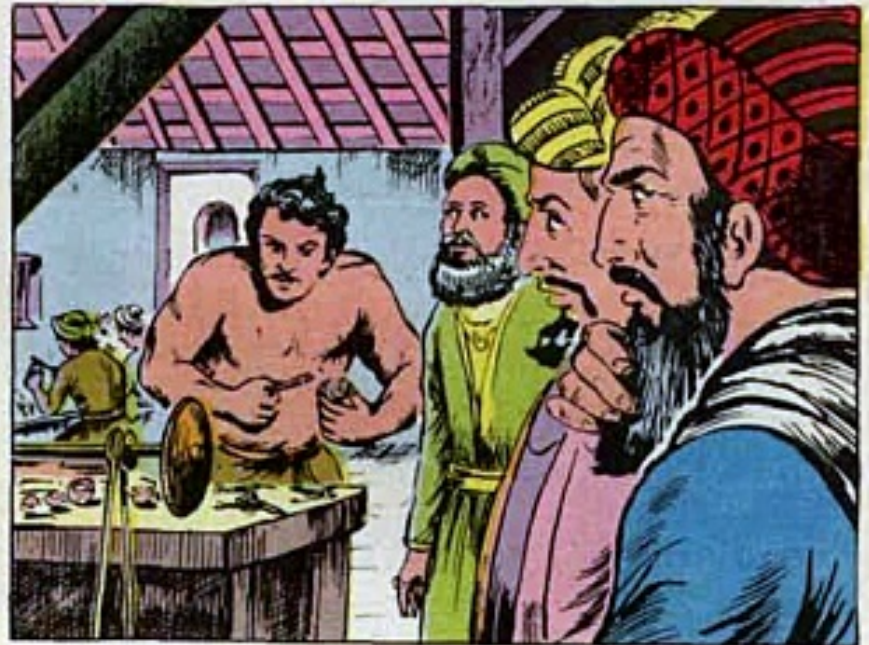
गोलकोंडा दुर्ग के वैभवपूर्ण दिन समाप्त होगये। मुग़ल साम्राज्य भी धीरे-धीरे पतन की तरफ़ अग्रसर होने लगा, इसलिए मुग़ल शासकों ने भी दुर्ग की रक्षा पर विशेष ध्यान नहीं दिया। लेकिन गोलकोंडा दुर्ग में हीरों को सान पर धरने का काम शुरू हुआ, इसलिए उसका प्रभाव दुबारा बढ़ गया।

बहू की परीक्षा

विदर्भ देश के राजा विजयसेन एक उत्तम शासक थे। वे अपने अनेक विशिष्ट गुणों के कारण न केवल अपने देश में, बल्कि पड़ोसी देशों में भी विख्यात थे। उनके राज्य में प्रत्येक नागरिक बिना किसी दुख एवं अशांति के सुखी और खुशहाल जीवन जीता था। विदर्भ देश में जन्म लेना भाग्य की बात समझी जाती थी। प्रजा का हर व्यक्ति राजा विजयसेन को पिता के समान मानता और देवता के समान पूजता था। राजा विजयसेन के होते विदर्भ देश का हर नागरिक सुरक्षित है, ऐसी पड़ोसी राज्यों में कहा जाता?

राजा विजयसेन के एक ही पुत्र था, नाम था अमरसेन। उसके अन्दर प्रेम, उदारता, वीरता, त्याग आदि अन्य गुण तो थे, पर बुद्धिमत्ता का अभाव था वह कुशलता से समस्याओं का हल नहीं ढूंढ पाता था। राजा का जीवन तो समस्याओं से भरा होता है, भावी राजा में बुद्धिमत्ता की कमी राजा विजयसेन के लिए चिंता का कारण बनी हुई थी।

एक दिन राजा विजयसेन ने मंत्रियों से इस विषय पर चर्चा की।

उन्होंने कहा, "मंत्रिगण, आप लोग जानते हैं कि युवराज अमरसेन में अनेक दुर्लभ गुण हैं, पर मैंने अनेक बार परीक्षा लेकर देखा है, वे बुद्धिमत्ता और कुशाग्रता के गुण में पूरा नहीं उतरते। मुझे चिंता है, जब राज्य का भार उनके कंधों पर आयेगा, तब वे उस संकट का सामना कैसे कर सकेंगे, जिसके लिए अत्यन्त तीक्ष्ण बुद्धि की आवश्यकता होती है?" सब मंत्रियों ने एक मत हो सुझाव दिया, "महाराज, अगर युवराज का विवाह कुशल, समय का ज्ञान रखनेवाली, विवेकशीला एवं प्रबुद्ध कन्या से हो जाये तो यह समस्या शाश्वत रूप से हल हो

सकती है। अब वे विवाह-योग्य आयु में प्रवेश भी कर चुके हैं।"

राजा विजयसेन को मंत्रियों की सलाह अच्छी लगी। उन्होंने अपने कुछ विशेष गुप्तचरों को ऐसी कन्या का पता लगाने के लिए नियुक्त किया। कुछ दिनों बाद राजा को उनके द्वारा एक कन्या का समाचार मिला। राजा ने एक तीर्थयात्री जैसा छद्मवेश धारण किया और उस कन्या के गाँव की ओर प्रस्थान किया।

सुमति नाम की वह कन्या वीरगाँव के मुखिया धवलसिंह की पुत्री थी। जब राजा वीरगाँव की सीमा में पहुँचे, तब तक सब तरफ़ अन्धकार फैल चुका था। मुखिया धवलसिंह किसी काम से शहर गया हुआ था, इसलिए सुमति ने राजा का अतिथि-सत्कार किया।

रात में भोजन के समय राजा विजयसेन अपने दायें हाथ की हीरे की अंगूठी को बायें हाथ में पहनते हुए बोले, "बेटी, दायां अगर बायां बन जाये तो कोई कठिनाई ही नहीं है।" राजा उस कन्या की बुद्धिमत्ता की परीक्षा लेना चाहते थे।

सुमति राजा को खाना परोसती रही। उसने देखा, राजा पीढ़े पर बैठने में असुविधा का अनुभव कर रहे हैं। तब वह बोली, "दायां अगर बायां बन जाये तो कठिनाई क्यों न होगी? जो सदा कोमल एवं मुलायम आसन का अभ्यस्त हो, उसे अगर पीढे पर बैठा दिया जाये तो कठिनाई तो होती ही है।"

राजा सुमति की बात में छिपा मर्म समझ गये, फिर बोले, "बेटी, तब तो तुम्हारे विचार में इस प्रकार स्थान-भंग होना कष्ट का कारण होता है?"

सुमति हँसकर बोली, "लेकिन इससे भी अधिक कठिन और कष्टप्रद चीज़ एक और है।"

राजा विजय सेन उत्सुक होकर पूछा, "वह क्या चीज़ है, बेटी? क्या मुझे बताओगी?"

"वह है अफवाह! यह सबसे अधिक कष्टप्रद और ख़तरनाक चीज़ है।" सुमति ने जवाब दिया।

"क्या अफ़वाह सचमुच ही इतनी ख़तरनाक चीज़ है?" राजा ने सुमति की बात पर सहसा विश्वास न करने का बहाना करते हुए पूछा।

"जी, मैं ऐसा ही सोचती हूँ। जो लोग अफ़वाहों पर विश्वास करते हैं, वे अपनी विवेकशीलता एवं तार्किक बुद्धि खो बैठते हैं। वे सत्य को असत्य मान बैठते हैं और असत्य को

सत्य मान लेते हैं। अब इससे अधिक ख़तरनाक बात और क्या होगी ?" सुमति बोली।

सामान्य परिवार में जन्मी एक लड़की के भीतर इतनी विवेकशीलता और बुद्धिमत्ता देखकर एक ओर तो राजा को प्रसन्नता हुई, किन्तु दूसरी ओर इन गुणों को राजकुमार अमरसेन में न पाकर राजा को दुख भी हुआ और सुमति के प्रति ईर्ष्या भी हुई।

राजा को घी परोसती हुई सुमति ने राजा के चेहरे के भाव-परिवर्तन को देखकर कहा, "अगर लोग अपनी व्यथा-पीड़ा का कारण समझ लें तो सभी लोग सुखपूर्वक जीवन बिता सकते हैं।"

राजा ने सुमति की बातों का भाव जानने के विचार से पूछा, "बेटी, सबको पीड़ा पहुँचानेवाली बात क्या है? क्या मुझे बताओगी?"

मानव-समाज में आधे लोगों को पीड़ा देनेवाली चीज़ ईर्ष्या होती है। अगर अपने अन्दर कोई गुण नहीं है, तो उसे दूसरों में पाकर वे प्रसन्न नहीं होते, इर्ष्या के कारण दुखी हो उठते हैं। यह ईर्ष्या ही है जो एक अन्तर्दाह बनकर उन्हें जलाती है।"

राजा मौन होगये। फिर भोजन के बाद हाथ धोने के लिए वे पिछवाड़े की तरफ़ बढ़े। एक क्षण ठहरकर उन्होंने पूछा, "बेटी, यहाँ अन्धेरा इतना गहरा क्यों है?"

सुमति राजा के हाथ पर पानी डालते हुए हँसकर बोली, "चाहे यह अन्धेरा कितना भी गहरा क्यों न हो, पर झूठ जैसा गहरा अन्धेरा नहीं है।"

राजा विजयसेन यह उत्तर पाकर कुछ

अचम्भित हुए। तब सुमति ने उन्हें पान-सुपारी देते हुए कहा, "महाराज, मैंने कुछ अन्यथा बोल दिया हो तो मुझे क्षमा कीजिये!"

राजा की समझ में नहीं आया कि छद्मवेश में होने पर भी सुमति ने कैसे भांप लिया कि वे राजा हैं। यह बात राजा ने सुमति से पूछी।

सुमति बोली, "महाराज, आपने अपने को काशी का तीर्थयात्री बताया था। इतनी लम्बी यात्रा कोई अकेला नहीं करता। वह हमेशा समूह में यात्रा करता है। इसलिए यह तो मैंने आपको देखते ही समझ लिया कि आप काशी-यात्रा पर जानेवाले यात्री नहीं हैं।"

"पर इस बात का तुमने कैसे अनुमान लगाया कि मैं एक राजा हूँ?" राजा ने प्रश्न किया।

"आपने पीढ़े पर जितनी असुविधा से भोजन किया, उसके आधार पर मैंने यह अनुमान लगा लिया कि आप अधिक श्रेष्ठ और राजसी आसन पर बैठकर भोजन करते हैं। आपने भोजन के पूर्व दायें हाथ की अंगूठी को बायें हाथ में पहना। उस समय वह अंगूठी दीपक के प्रकाश में धक-धक चमक उठी। उतनी क़ीमती अंगूठी केवल कोई धनवान पुरुष नहीं, बल्कि राजपुरुष ही पहन सकता है।..." यह कहकर सुमति रुक गयी।

राजा विजयसेन ने मन्द-मन्द मुस्कराकर कहा, "बेटी, रुकक्यों गयीं? सुनने में मुझे बड़ा अच्छा लग रहा है, आगे बोलो।"

"महाराज, मैं जो बात कहने जारही हूँ, उसके लिए आपको मुझे क्षमा करना होगा। मैंने सुना है, राज्य में अधिकांश बड़े लोग बहुत जल्दी ईर्ष्या एवं द्वेष का शिकार हो जाते हैं। मेरी चातुर्यपूर्ण बातों से आपके चेहरे पर जो भाव-परिवर्तन कुछ क्षणों के लिए हुआ, उससे यह बात स्पष्ट होगयी।"

सुमति की बुद्धिमत्ता, विवेकशीलता, आदर-सत्कार के ढ़ंग एवं अभिजात संस्कारों से राजा अत्यन्त प्रभावित हुए। उनके मन में ऐसी बहू पाने का निश्चय दृढ़ होगया।

इस घटना के कुछ ही दिनों बाद मखिया वीरसिंह की पुत्री सुमति के साथ युवराज अमरसेन का विवाह होगया। सुमति ने रानी बनकर राज्य के अनेक जटिल मामलों में अपने पति का मार्गदर्शन किया।

उत्तर रामायण

कार्तवीर्यार्जुन के हाथों बन्दी बनाये गये और फिर मुक्त हुए रावण का अहंकार तब भी कम नहीं हुआ। 'अहंकार एक ऐसी चीज़ है जो मनुष्य को अन्त तक भ्रम में रखती है। वह कभी अपना सच्चा रूप नहीं देख पाता और न तो दूसरे में ही किसी सच्चाई को, किसी बल या पराक्रम को देखने देता है। रावण में अनेक गुण थे, पर उसके अहंकार ने उन सारे गुणों पर परदा डाल दिया था। अहंकार के मद में मतवाला होकर वह सारे विश्व में भ्रमण करता और उसे जो भी शक्तिशाली दिखाई देता, उसे युद्ध के लिए ललकारता। अपनी ऐसी ही उन्मत्तता में एकबार उसने किष्किन्धा में जाकर बाली को युद्ध के लिए ललकारा।

बाली के मंत्री तार ने रावण को समझाकर कहा, "हे रावण, इस समय बाली किष्किन्धा म नहीं है। अन्य वानर आपके साथ युद्ध करने में असमर्थ हैं। बाली संध्या-वन्दन करने के लिए चार समुद्रों के तट पर गये हुए हैं। तुम अस्थियों के इस ढेर का निरीक्षण करो! बाली के हाथों मृत्यु को प्राप्त व्यक्तियों की अस्थियों का ढेर है यह! यदि तुम भी इस ढेर में शामिल होना चाहते हो तो थोड़ी देर ठहरो, बाली शीघ्र ही लौट आयेंगे। फिर भी, यदि तुम्हें जल्दी हो तो दक्षिणी समुद्र-तट पर चले जाओ, वहाँ तुम्हें बाली के हाथों तत्काल मृत्यु प्राप्त होगी।"

मंत्री तार की बात सुनकर रावण कुपित हो उठा। एक साधारण मंत्री उसे उपदेश दे, यह उसे कब सहन हो सकता था। रावण का तो स्वभाव ही था कि वह किसी की बात नहीं मानता

था और जो उसे ठीक लगता या जो वह सोच लेता, उसे ही करता था। उसने तार की भर्त्सना की और पुष्पक विमान पर सवार होकर दक्षिणी समुद्र-तट पर पहुँचा। वहाँ उसने देखा कि मेरु पर्वत के सदृश दीर्घकाय कोई व्यक्ति संध्या-वन्दन कर रहा है। रावण ने कुछ दूर पर ही अपना पुष्पक विमान रोक दिया और चुपके से उतरकर बाली की तरफ़ बढ़ा। वह बाली को अकस्मात् पीछे से पकड़ना चाहता था। उसके स्वभाव में ही छल था। वह जहाँ आवश्यकता होती, सम्मुख युद्ध करता और जहाँ दूसरे पक्ष को अधिक बलवान पाता, वहाँ अपनी माया का प्रयोग करता। बाली की बलवत्ता की कहानियाँ उसने सुन रखी थीं, इसलिए वह उसे छल से ही वश में करना चाहता था और इसीलिए वह दबे पाँव उसकी पीठ की तरफ़ बढ़ा। बाली ने हठात् पीछे मुड़कर रावण को देख लिया। रावण के मन की बात को ताड़कर भी बाली इस प्रकार मौन बना रहा, मानो कुछ जानता ही नहीं हो। पर जब रावण उसके बिलकुल निकट पहुँच गया तो उसने झपटकर रावण को इस प्रकार अपनी पकड़ में ले लिया, जैसे गरुड़ सर्प को अपने पंजों में कस लेता है। बाली ने रावण को अपनी बगल में दबाया और फुर्र से आकाश में उड़ गया।

रावण को बाली की पकड़ से छुड़ाने के लिए उसके मंत्री चिल्लाते हुए बाली का पीछा करने लगे। उन्होंने बहुत दूर तक बाली का पीछा किया, फिर हारकर वापस लौट गये। उनके लिए यह अच्छा ही हुआ, वरना वे बाली के हाथों अपने प्राण गंवा बैठते।

बाली रावण को अपनी बगल में दबाये उड़ता गया और अन्त में पश्चिमी सागर के तट पर उतर पड़ा। वहाँ उसने स्नान किया और संध्यावन्दन की समाप्ति के बाद उत्तरी सागर की ओर चल पड़ा। इसके बाद वह पूर्वी सागर-तट पर गया। उसने चारों समुद्रों के तटों पर संध्यावन्दन समाप्त किया और रावण के साथ किष्किन्धा लौट आया। बाली ने किष्किन्धा के एक उद्यान में रावण को उतार कर मंद हास करते हुए उससे पूछा, "रावण, तुम कहाँ से आये हो? क्या चाहते हो?"

रावण ने बाली से क्षमा माँगी और कहा, "आपके जैसा बलवान, पराक्रमी और तेज गतिवाला इस पूरी सृष्टि में दूसरा कोई नहीं है। मुझे कांख में दबाकर आपने चारों समुद्रों में डुबकी लगायी, आपकी शक्ति अपूर्व है, अद्भुत है! मैं अग्नि को साक्षी बनाकर आपसे मैत्री स्थापित करना चाहता हूँ।"

इसके बाद अग्नि प्रज्वलित करके दोनों ने परस्पर आलिंगन किया और भ्रातृ मैत्री स्थापित की। तदुपरान्त रावण ने किष्किन्धा में एक महीना बिताया और राज्य की ओर से क्षेष्ठ अतिथ्य प्राप्त किया। फिर रावण के मंत्री आकर उसे लंका में ले गये।

अगत्स्य मुनि ने श्रीरामचंद्र को यह वृत्तान्त सुनाकर कहा, "रामचंद्र, तुम्हारे हाथों एक ही बाण से मृत्यु को प्राप्त हुआ बाली अपार शक्तिशाली और पराक्रमी था।"

तब रामचंद्र ने पूछा, "महर्षि, मैं यह स्वीकार

करता हूँ कि बाली और रावण की बलवत्ता महान थी। पर हनुमान मुझे इनसे कहीं अधिक शक्तिशाली प्रतीत होते हैं। उन्होंने समुद्र को सौ योजन लाँघा और रावण के लंका-स्थित राजभवन में आसानी से प्रवेश करके अकेले ही असंख्य राक्षसों का संहार किया। एक हनुमान ने लंका नगरी में आग लगायी। ऐसा प्रतीत होता है कि हनुमान ने जो साहसिक कार्य किये, वे त्रिभुवन में किसी के लिए भी संभव नहीं हैं। फिर भी, मेरे मन में एक सन्देह है। इतने महान पराक्रमी होने के बाद भी हनुमान ने बाली का वध क्यों नहीं किया और वह अपने राजा सुग्रीव को नाना प्रकार की यातनाएँ झेलते देखकर भी मौन क्यों बने रहे? आप मेरी इस शंका का समाधान करने की कृपा करें!"

अगस्त्य मुनि ने उत्तर दिया, "हे रामचंद्र, तुमने हनुमान के बारे में जो कुछ कहा, वह सत्य है । हनुमान जैसा बलवान, वेगवान और बुद्धिमान अन्यत्र दुर्लभ है । हनुमान का बल-पराक्रम जगत-प्रसिद्ध है । ऐसा कोई भी कार्य नहीं, जो हनुमान के लिए असंभव हो । उसने शैशव-अवस्था में ही अनेक अद्भुत कार्य किये । संभवतः वह सब कुछ उसे स्मरण भी न होगा । वास्तव में, मुनियों ने हनुमान को उसके बाल्यकाल में ही एक शाप दिया था । मैं उसकी विचित्र कहानी तुम्हें सुनाता हूँ ।"

अगत्सय मुनि ने कहना आरंभ किया, "हनुमान के पिता केसरी मेरुपर्वत पर राज्य करते थे । केसरी की पत्नी अंजना थी । वायुदेव के द्वारा हनुमान का जन्म हुआ था । हनुमान की चंचलता अद्‌भुत थी और शिशु हनुमान पर नियंत्रण करना उसके माता-पिता के लिए भी कठिन हो जाता था । यह तब की घटना है, जब हनुमान गोद के बालक थे । एक बार शिशु हनुमान को एक स्थान पर लिटाकर अंजना फल तोड़कर लाने के लिए वनभूमि में गयी । अंजना पुत्र के लिए श्रेष्ठ फल प्राप्त करने के लिए बन में कुछ दूर निकल गयी और उसे थोड़ा विलम्ब होगया । इस बीच हनुमान को भूख लगी और उसने रोना आरंभ कर दिया । उसी समय पूरब दिशा में सूर्य का लाल बिम्ब उदित हुआ । उसे खाद्य फल समझकर वह शिशु उसे पकड़ने के लिए आकाश में उड़ने लगा । सूर्य के सम्मुख जाते हुए दूसरे सूर्यमंडल के समान हनुमान को देखकर देवता, यक्ष और दानव आश्चर्यचकित हो उठे, क्योंकि उस समय तक हनुमान की गति पवन एवं गरुड़ की गति से कहीं अधिक होगयी थी ।

सूर्य की ओर तीव्र गति से जाते अपने पुत्र को देखकर वायु ने ओसकण गिराने आरंभ किये ताकि वह सूर्य के ताप से अपने शिशु की रक्षा कर सके । वात्सल्य जिसप्रकार मानव-जाति का विशेष गुण है, वैसे ही देवता भी इससे मुक्त नहीं हैं । अपने निकट आनेवाले बाल हनुमान पर सूर्यदेव भी सौम्य ही बने रहे और अपना प्रताप नहीं दिखाया । इसी समय एक और घटना हुई । हनुमान के सूर्य के निकट पहुँचने के समय ही राहू भी सूर्य को ग्रसने के लिए सूर्य के रथ के पास पहुँच गया । राहू को देखते ही हनुमान ने सूर्य को

छोड़ दिया और उसे ग्रसने को दौड़ा। राहू भयभीत होकर भाग गया और इंद्र की सभा में प्रवेश करके बोला, ''हे इंद्रदेव, यह कैसा अन्याय और अधर्म है? मैं पर्व के मुहूर्त में सूर्य को निगलने को हुआ, तभी आपने एक और राहू को भेज दिया। वह सूर्य के साथ मुझे भी निगल जाना चाहता था।''

राहू की बात सुनकर इंद्र ने राहू को अपने साथ लिया और अपने ऐरावत हाथी पर सूर्य के पास पहुँचे। हनुमान तब तक सूर्य के पास ही थे। राहू को देखते ही वे उसे पकड़ने के लिए दौड़े।

"इंद्रदेव, मेरी रक्षा करो!" राहू चिल्ला उठा।

"मैं इसका वध करूँगा। तुम डरो मत!" इंद्र ने राहू को आश्वासन दिया। इस बीच हनुमान की दृष्टि ऐरावत पर पड़ी। उन्होंने उसे एक सफ़ेद फल समझा और उसे लेने के लिए दौड़े। भूख मनुष्य को क्या से क्या करने के लिए विवश कर देती है। पर हनुमान के संदर्भ में तो यह एक चमत्कार बन गयी, जिसे देखकर न केवल भूलोकवासी, बल्कि देवता तक चमत्कृत हो उठे। जब हनुमान ने श्वेत फल समझकर ऐरावत को अपना लक्ष्य बनाया तब इंद्र ने हनुमान पर धीरे से अपने वज्रायुध का प्रहार किया। उसके आघात से बाल हनुमान एक पर्वत पर जा गिरे, जिससे उनका बायाँ जबड़ा दब गया।

अपने पुत्र पर इस तरह इंद्र का प्रहार होते देखकर वायुदेव क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने विश्व में संचार करना बन्द कर दिया। वायुदेव ने हनुमान को उठाया और पहाड़ी गुफ़ा में छिपकर बैठ गये। वायु का संचार रुक जाने के संसार के समस्त प्राणियों का दम घुटने लगा। वायु तो विश्व का प्राण है। उसके संचार से ही प्राणी

प्राणवान है। जब वायु की गति रुद्ध हुई तो प्राण की गति ही रुद्ध होगयी। सब तरफ़ त्राहि-त्राहि मच गयी। देव, गन्धर्व आदि ब्रह्मा के पास गये और उनसे रक्षा के लिए प्रार्थना की। ब्रह्मा सबको साथ लेकर वायुदेव के पास उस पहाड़ी गुफ़ा में गये। ब्रह्मा को देखकर वायुदेव हनुमान को गोद में लेकर बाहर आये और उनके चरणों में गिर पड़े। ब्रह्मा ने अपने हाथ से बालक हनुमान का स्पर्श किया। हनुमान की अवरुद्ध श्वास ठीक होगयी। वायुदेव ने प्रसन्न होकर पुनः सारे विश्व में संचार आरंभ किया।

वायुदेव को और अधिक प्रसन्न करने के लिए ब्रह्मा ने दिक्पालों से कहा कि वे हनुमान को वरदान प्रदान करें। इंद्र के वज्रायुध के प्रहार से हनुमान की हनु (ठोढ़ी) पर किंचित् आघात हुआ था, इसलिए इंद्र ने उस बालक को हनुमान नाम दिया और साथ ही यह वदा भी दिया कि उन्हें भविष्य में कभी वज्रायुध के प्रहार से आघात न लगे। सूर्य ने अपने तेज का एक अंश हनुमान को प्रदान किया, साथ ही यह वरदान भी दे दिया कि हनुमान एक महान वक्ता और विद्वान के रूप में प्रसिद्ध हो। इसके बाद वरुण ने हनुमान को जल से अघात्य रहने का वर दिया। कालदण्ड से हनुमान की मृत्यु न हो, यह वर यमराज ने दिया। कुबेर ने वर दिया कि उनकी गदा से हनुमान को कोई आघात न पहुँचे। शिव ने वर दिया कि उनके स्वास्त्र हनुमान के लिए अप्रभावकारी रहें। ब्रह्मा एवं विश्वकर्मा ने भी हनुमान को वर दिये। इन वरों के प्रभाव से हनुमान शत्रुओं के लिये दुर्धर्ष, युद्ध में अजेय, कामरूप एवं कामगमन आदि शक्तियों से संपन्न बन गये। अपने पुत्र को इसप्रकार वरमंडित देख वायुदेव की प्रसन्नता का पार न रहा।

अब हनुमान पर कोई नियंत्रण न रहा। वह अपार शक्ति संपन्न होकर निर्भय भ्रमण करने लगे और आश्रमवासी मुनियों को नाना प्रकार से संत्रास देने लग। हनुमान स्वभाव से ही चंचल थे। दुष्ट स्वभाव के तो वे न थे, पर बालपन में ही इतनी अधिक शक्ति पाकर उनकी चंचलता बढ़ गयी। वे एक क्षण को भी न स्वयं शांत रहते थे, न किसी और को शांत बैठने देते थे। वे अनेक चपल एवं बलशाली कार्यों से नित्य कोई न कोई ऊधम मचाते। मुनिगण जानते थे कि हनुमान

देवताओं के द्वारा अनेक वरदान-प्राप्त हैं, इसलिए जब हनुमान उनके वल्कल, अग्निकुंड एवं कृष्णाजिनों को ध्वंस करते तो वे अनदेखा कर देते ।

हनुमान को केसरी एवं वायुदेव दोनों ने समझाया कि वे अपनी चंचलता छोड़ दें, पर हनुमान ने उनकी बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। उलटे निषेध से वे और उद्दण्ड हो उठे। मुनियों के शांत वातावरण में हलचल पैदा करना, उनके ध्यान-भजन, संध्या-वन्दन के काल में भंग उपस्थित करना उनकी प्रतिदिन की दिनचर्या होगयी। अन्त में मुनियों ने रुष्ट होकर हनुमान को शाप दिया, 'हनुमान, तुम अपनी शक्ति के मद में आकर ये सब अत्याचार कर रहे हो। इसलिए तुम अपनी शक्ति से तब तक अबोध रहोगे, जब तक तुम्हें कोई तुम्हारी शक्ति का स्मरण न करा देगा।'

इसके बाद हनुमान अपनी शक्ति की बात तो भूल गये और स्वाध्यायी, विद्वान बनकर आश्रमों में रहने लगे। उन्हीं दिनों वानरों के राजा ऋक्षराज का देहान्त होगया। उनके बाली और सुग्रीव नाम के दो पुत्र थे। वानरों ने ज्येष्ठ बाली का राज्याभिषेक किया और सुग्रीव को युवराज बनाया। बचपन में ही सुग्रीव तथा हनुमान के बीच अपूर्व मैत्री सम्बन्ध स्थापित हो गया था। जब बाली और सुग्रीव के बीच शत्रुता बढ़ी और सुग्रीव को अनेक यातनाएँ सहन करनी पड़ीं, तब हनुमान मुनियों के शाप के कारण अपनी शक्तियों से अनभिज्ञ थे, इसलिए वे सुग्रीव की कोई मदद न कर सके।"

इस प्रकार महर्षि अगस्त्य ने श्रीरामचंद्र को हनुमान की कथा सुनाकर कहा, "राज, हनुमान की शक्ति और उनका पराक्रम अद्भुत है! जानते हो, व्याकरण सीखने का निर्णय करके हनुमान सूर्य के साथ उदयाचल से अस्ताचल तक संचार किया करते थे। किसी भी विद्या में उनकी समानता करनेवाला कोई नहीं है। वे भविष्य के ब्रह्मा हैं।"

हनुमान की सम्पूर्ण कथा सुनने के पश्चात् रामचंद्र ने अगस्त्य से पूछा, "महात्मा, बाली और सुग्रीव के पिता ऋक्षराज कौन थे? उनकी कथा भी सुनाइये, मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी।"

बदला

मलयपुर के परिसर में मारदेव नाम का एक जादूगर रहता था। वह अनेक प्रकार की मंत्र-विद्याएँ जानता था। पर उसने उन विद्याओं का दुरुपयोग कभी नहीं किया था और न तो उनसे धन ही कमाया था। इसलिए वह गरीब साधारण इन्सान की तरह ही रहता था। मारदेव के लखन नाम का एक पुत्र था। उसे मारदेव ने अपनी सारी विद्याएँ सिखलायी थीं।

लखन महत्वाकांक्षी था। उसके मन में इन विद्याओं के द्वारा धन और यश कमाने की इच्छा थी। एकबार उसने अपने पिता से अनुमति ली और देशाटन पर निकल पड़ा। अनेक राजाओं ने लखन की जादूगरी देखी और प्रसन्न होकर उसे अच्छे पुरस्कार दिये। इस प्रकार यात्रा करता हुआ लखन तोरण देश पहुँचा। वहाँ के राजा विक्रमसेन से उसने बताया कि वह एक जादूगर है और उसने अपनी विद्या के प्रदर्शन से असंख्य राजाओं की प्रशंसा प्राप्त की है। यदि वे अनुमति दें तो वह उनके समक्ष भी अपनी विद्याओं का प्रदर्शन करना चाहेगा।

राजा विक्रमसेन को कई वर्षों बाद एक पुत्र की प्राप्ति हुई थी। अब उसकी उम्र एक वर्ष की थी। उस बच्चे की जन्मकुंडली देखकर ज्योतिषियों ने राजा को बताया था कि किसी जादूगर के कारण इस बालक के भाग्य में हीन योग पड़ा हुआ है। तब से राजा किसी ऐंद्रजालिक अथवा जादीगर के नाम से ही काँप उठते थे।

जब लखन ने प्रवेश करके अपना परिचय एक जादूगर के रूप में दिया तो राजा विक्रमसेन का दिल धड़क उठा। उनके पुत्र भद्रसेन ने एक माह पहले ही दूसरे वर्ष में प्रवेश किया था। इसी समय यह जादूगर आया है। निश्चय ही इसके द्वारा उनके पुत्र की हानि हो सकती है।

राजा विक्रमसेन गहरे सोच में पड़ गये और

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित एक कहानी

उन्होंने अपने मंत्री ज्ञानदेव से गुप्त रूप से मंत्रणा की और किसी भी तरह इस नवयुवक जादूगर का अन्त करने की प्रार्थना की।

मंत्री ज्ञानदेव ने लखन को एकान्त में बुलाकर कहा, "सुनो, महाराजा को जादूगरी का खेल देखना बहुत पसन्द है। उन्होंने मुझे तुम्हारा सत्कार करने का आदेश दिया है। आज से तुम राजा के अतिथि हो। तुम राज अतिथि-गृह में उनका आतिथ्य स्वीकार करो! कल हम तुम्हारी विद्या के प्रदर्शन का प्रबन्ध करेंगे।"

लखन अत्यन्त आनन्दित हो उठा और राजा के अतिथि-गृह में ठहर गया। उसी रात उसे मंत्री ज्ञानदेव की व्यवस्था के अनुसार विषभरा भोजन परोसा गया। उस भोजन को खाते ही लखन का प्राणान्त हो गया। मंत्री ने सुबह होने से पहले ही विश्वस्त सेवकों के द्वारा लखन की लाश को चुपचाप गड़वा दिया।

हालांकि यह कार्य अत्यन्त गुप्त रूप से किया गया था, फिर भी दबे हुए स्वर में इसकी चर्चा सर्वत्र होने लगी। कुछ समय बाद यह ख़बर मारदेव तक पहुँची। इस ख़बर की सच्चाई को जानने के लिए मारदेव मलयपुर से निकला और कुछ ही दिनों में तोरण देश पहुँच गया। लखन तोरणदेश पहुँचा था, यह समाचार उसे कई लोगों ने दिया। पर आगे की घटना के बारे में छिपे तौर पर उसे इतना ही पता लगा कि लखन को राज-सम्मान देने की आड़ में उसकी हत्या करायी गयी है।

मारदेव स्वाभाव से सज्जन था। लेकिन जब उसने सुना कि बिना किसी कारण के राजा ने उसके पुत्र को मरवाया है तो वह विक्षिप्तसा हो उठा। उसके अन्दर प्रतिशोध की ज्वाला जल उठी। वह राजभवन के परिसर में घूमता रहा। एक बार जब दासियाँ राजकुमार भद्रसेन को खिलाने के लिए उद्यान में लेकर आयीं, तब उसने अपनी जादूगरी के प्रभाव से दासियों को धोखा देकर राजकुमार का अपहरण कर लिया और उसे लेकर अपने देश लौट गया। उसने घर पहुँचकर राजकुमार के वस्त-आभूष्ण उतार दिया और उन्हें एक पेटी में बन्द कर दिया। इसके बाद वह राजकुमार को वीरमणि नाम देकर अपने पुत्र के समान पालने लगा।

राजा विक्रमसेन को जब यह मालूम हुआ कि उनके पुत्र का अपहरण होगया है, तो वह अत्यन्त हताश हो उठे । राजा ने अपनी ओर से जो सावधानी बरती थी, वह व्यर्थ प्रमाणित हो गयी । बहुत वर्षों बाद एक पुत्र-रत्न प्राप्त हुआ था, वह खो गया । अपने पुत्र की चिंता में राजा विलाप करने लगा, तब मंत्री ज्ञानदेव ने समझाकर कहा, "महाराज, जो भाग्य-विधान था, वह होकर ही रहा । आप धैर्य धारण कीजिये! राजकुमार का अपहरण करनेवाला निश्चय ही कोई जादूगर होना चाहिए । हमने जिस अल्पवयस्क जादूगर का वध कराया है, उसके पिता अथवा किसी सम्बन्धी ने ही राजकुमार को चुराया है । हम स्वयं ही राजकुमार की हानि का कारण बन गये हैं । फिर भी हमारे ज्योतिषियों ने जादूगर के द्वारा राजकुमार की प्राण-हानि की बात नहीं बतायी थी । भविष्य में अवश्य ही एक दिन ऐसा आयेगा, जब राजकुमार उस जादूगर के चंगुल से निकलकर हमारे पास आयेंगे ।"

लखन की हत्या जिस समय हुई, उस समय उसकी आयु सोलह वर्ष की थी । मारदेव ने राजकुमार को पाल-पोसकर सोलह वर्ष का किया और अब वह तोरण देश के राजा से बदला लेने की योजना बनाने लगा । वह राजकुमार को साथ लेकर तोरण देश पहुँचा और एक सराय में ठहर गया ।

जादूगर मारदेव ने राजकुमर से कहा, "बेटा वीरमणि, तुम जब बालक थे तो तुम्हारे भाई लखन ने तोरणदेश के राजा का आतिथ्य प्राप्त किया था । तुम इस पेटी को लेकर राजा के पास जाना और उनके दर्शन कर उनसे कहना कि उन्होंने तुम्हारे भाई को जो पुरस्कार दिया था, उसके बदले में तुम राजा को यह पुरस्कार दे रहे हो । यह कहकर तुम यह पेटी उन्हें सौंप देना!"

वीरमणि ने विस्मित होकर मारदेव से कहा, "पिताजी, आपने अभी तक मुझे यह नहीं बताया था कि मेरे एक भाई भी है!"

"बेटा, अभी तुम मेरे कहे अनुसार करो ! बाद में तुम्हें तुम्हारे भाई का समाचार भी मिल जायेगा ।" मारदेव ने कहा ।

राजकुमार पेटी लेकर राजा के दर्शन करने के लिए राजसभा में गया । उसने राजा को प्रणाम कर

कहा, "महाराज, मैं मारदेव नाम के जादीगर का पुत्र वीरमणि हूँ। बहुत वर्ष पूर्व जब मेरा भाई अपनी जादूगरी का प्रदर्शन करने के लिए यहाँ आया था, तब आपने उसका आतिथ्य कर उसे जो पुरस्कार दिया था, उसके बदले में मुझे मेरे पिता ने पुरस्कार स्वरूप यह पेटी आपको सौंपने का आदेश दिया है।" यह कहकर वीरमणि ने वह पेटी राजा के सामने रख दी।

राजा ने पेटी का ढक्कन खोला तो उसमें उनके पुत्र भद्रसेन के वे कपड़े और आभूषण थे, जो उसने अपहरण के समय धारण किये हुए थे।

राजा को लगा कि वे दुख और क्रोध के आवेश से पागल होगये हैं। उस पागलपन में उन्होंने अपनी तलवार खींच ली और नवयुवक वीरमणि का वध करने के लिए उद्यत होगये। पर मंत्री ज्ञानदेव ने उन्हें बीच में ही रोक लिया और कहा, "महाराज, आप जल्दीबाजी न कीजिये! यह सच है कि ये सारी चीज़ें राजकुमार की हैं, पर अगर जादूगर ने राजकुमार का वध कर दिया होता, तो वह इन चीज़ों को उसी समय भेज देता। राजकुमार इस समय जिस उम्र के होते, इस युवक की उम्र उतनी ही प्रतीत होती है।"

मंत्री ज्ञानदेव ने पेटी में से एक-एककर सारी चीज़ें निकालीं। उन चीज़ों के नीचे एक पत्र मोड़कर रखा हुआ था। उसमें लिखा था—"राजन, आपने स्वयं अपने पुत्र की हत्या की है। आपने कुछ वर्ष पूर्व मेरे पुत्र लखन का वध कराया था। वह बदला आज पूरा हुआ। यह युवक मेरा बेटा वीरमणि नहीं, आपका बेटा भद्रसेन है।"

अगर मंत्री ज्ञानदेव ने राजा विक्रमसेन को रोका न होता तो वे आज जादूगर की योजना के अनुसार पुत्रघात कर बैठते। राजा ने आगे बढ़कर अपने पुत्र का आलिंगन किया। उनकी आँखों से आनन्दाश्रु बह निकले। राजा ने तत्काल अपने सेवकों को भेजकर जादूगर मारदेव को बुलवा भेजा। उसके पुत्र लखन की अकारण हत्या के लिए क्षमा माँगी और उसे उत्तम पुरस्कार प्रदान किया। राजा की आज्ञा से जादूगर मारदेव उनके राज-परिकर में ही रहने लगा।

बात की बात

राजा विक्टर के लिज़ा नाम की एक बातूनी लड़की थी। राजकुमारी लिज़ा से बात करना किसी के लिए संभव नहीं था। जब लिज़ा विवाह योग्य हुई तो राजा ने यह ढिंढोरा पिटवाया कि राजकुमारी लिज़ा को जो बातचीत में पराजित करेगा, उसके साथ राजकुमारी का विवाह कर दिया जायेगा, साथ ही उसे आधा राज्य भी मिलेगा।

सभी प्रकार के लोगों को इस प्रतियोगिता में शामिल होते देखकर राजा ने एक शर्त लगा दी— 'जो भी हारेगा, उसके कानों पर लोहे के गर्म छड़ से दाग दिया जायेगा।'

राजकुमारी की शादी का समाचार सुनकर जार्ज, पाँल और विल्सन नाम के तीन युवक भाई अपने घर से निकल पड़े। रास्ते में उन्हें एक मरी हुई मैना दिखाई दी। छोटे भाई विल्सन ने उसे हाथ में लेकर कहा, "भैया, बताओ, मुझे क्या मिला है?"

जार्ज और पाल एक साथ बोल उठे, "अरे, इसे फेंक दे! इसकी क्या ज़रूरत है?"

"शायद किसी काम आजाये!" यह कहकर विल्सन ने उस मैना को छिपा लिया।

थोडी दूर आगे बढ़ने पर उसे रेशे का एक बंडल मिला। बड़े भाइयों ने उसे भी फेंक देने की सलाह दी, लेकिन विल्सन ने उसे भी रख लिया।

रास्ते में विल्सन को एक-एक करके बर्तन का एक टुकड़ा, भेंडे के दे सींग, लकड़ी की एक कील और एक पुराना जूता मिला।

सबसे पहले जार्ज को राजकुमारी लिज़ा के पास ले जाया गया। वह बोला, "आज तो बड़ा सुदिन है। यहाँ बहुत गर्मी मालूम होती है।"

"उसमें तो ओर भी ज़्यादा गर्मी होगी।" यह कहकर राजकुमारी ने पास ही जल रही भट्टी की तरफ इशारा किया। उसे दिखते ही जाँर्ज की

नार्वे की लोक कथा

बोलती बन्द होगयी। उसे अपने दोनों कान दगवाकर बाहर निकलना पड़ा।

दूसरे भाई पाँल की भी यही हालत हुई।

इसके बद विल्सन की बारी आयी। उसने राजकुमारी के पास आकर कहा, "आज बड़ा सुदिन है। यहाँ पर ताप बड़ा अच्छा है।"

राजकुमारी लिजा ने भट्टी दिखलाकर कहा, "यह तो बहुत ज़्यादा गर्म है!"

"इसमें इस मैना को भूना जा सकता है।" विल्सन बोला।

"मैना के टुकड़े छितर जायेंगे।" लिज़ा ने कहा।

"रेशम के इस पुलिन्दे से बाँध देंगे।" विलसन ने जवाब दिया।

"वह तो बहुत ढीला हो जायेगा।" लिज़ा बोली।

"लकड़ी की इस कील से कस देंगे।" विल्सन ने .कहा।

"चर्बी रिस जायेगी।" राजकुमारी बोली।

"बर्तन का यह टुकड़ा आड़े रख दूगाँ।" विल्सन बोला।

"तुम हर बात में कोई न कोई ऐंठ दिखाते हो।" लिज़ा खीज उठी।

"ऐंठ मेरी बातों में नहीं, इसमें है, देखो!" यह कहकर विल्सन ने मेंढे का एक सींग बाहर निकाला।

"हमने तो इस तरह की कोई चीज़ कभी चीज़ देखी नहीं।" लिज़ा बोली।

"लो देखो, ऐसी चीज़ हम दिखाते हैं।" यह कहकर विल्सन ने दूसरा सींग भी बाहर निकाल लिया।

"मुझे हराने के लिए खूब घिस रहे हो!" राजकुमारी ने सवाल किया।

"घिसनेवाली चीज़ मैं नहीं हूँ, यह जूता है।" विलसन बोला।

इसके बाद राजकुमारी लिज़ा की समझ में न आया कि आगे क्या कहे। वह विल्सन की बुद्धिमत्ता से अत्यन्त प्रसन्न हुई और उसने अपनी पराजय स्वीकार कर ली। विल्सन के साथ लिज़ा का विवाह होगया। विल्सन को आधा राज्य भी प्राप्त हुआ।

[२]

प्रियंवदा ने विजय को ऐसा उपाय बताने का आश्वासन दिया, जिससे वे निर्विघ विवाह कर सकें। इस बीच प्रियंवदा ने माता-पिता की योजना को निष्फल बनाने के बारे में काफ़ी सोच-विचार किया था और अब वह किसी नतीजे पर भी पहुँच गयी थी। पर इस विषय में अभी विजय कुछ भी नहीं जानता था, इसीलिए वह क्षण भर मौन खड़ा रहा, फिर कुछ भयभीत स्वर में उसने पूछा, "वह उपाय क्या है?"

"सावधानी से सुनो! राजभवन से बाहर निकलने के लिए एक गुप्त सुरंग मार्ग है। मैं उस मार्ग से बाहर निकल जाऊँगी। इस नगर में तुम्हारा घर कहाँ है, तुम मुझे बताओ, मैं वेश बदलकर वहाँ पहुँच जाऊँगी।" राजकुमारी प्रियंवदा ने कहा।

"राजकुमारी, क्या आपने इस बात पर विचार किया कि अन्तःपुर से आपके गायब होने का पता लगते ही सर्वत्र कैसी हलचल मच जायेगी?" विजय ने पूछा।

"इस बात का मुझे पूर्ण ज्ञान है। इस विषय में भी मैंने काफ़ी सोचा है। अब तुम मेरी योजना को धयानपूर्वक सुनो और जैसा मैं कहती हूँ, वैसा करो! इस बीच तुम यह ख़बर फैला दे कि उद्यान में एक मांत्रिक जादूगर ने प्रवेश करके राजकुमारी का अपहरण कर लिया है। ऐसी स्थिति में महाराज अवश्य ऐसी घोषणा करेंगे कि जो भी युवक राजकुमारी को मांत्रिक के चंगुल से मुक्त करेगा, उसके साथ राजकुमारी का विवाह किया जायेगा। इस घोषणा को सुनने के बाद तुम कुछ दिन प्रतीक्षा करना, फिर मुझे मेरे पिता के पास ले जाकर यह कह देना कि तुमने मांत्रिक से मेरी रक्षा की है। मैं भी महाराज से तुम्हारे कथन की

कर सकती थीं ।

प्रियंवदा को केवल इतना ही मालूम था कि सुरंग-मार्ग कहाँ है और उसमें कैसे प्रवेश किया जा सकता है! पर उसे इस बात की जानकारी नहीं थी कि वह सुरंग मार्ग कहाँ ख़त्म होता है । इस बात का पता लगाने के लिए उसने आधी रात के समय सुरंग में प्रवेश किया । सुरंग में प्रवेश करके सुरंग के दूसरे छोर का पता लगाना बुद्धिमानी की बात नहीं थी, पर प्रियंवदा अनजाने में ही यह भूल कर चुकी थी ।

उस सुरंग के कुल तीन प्रवेश-द्वार अथवा प्रवेश-मार्ग थे । एक राजा के मंत्रण-गृह में, दूसरा राजा के शयनागार में, तीसरा राजकुमारी के शयनागार में उसकी शैया के नीचे था । राजकुमारी की शैया के नीचे एक शिलाफलक था । उसे हटाने पर नीचे उतरने के लिए सीढ़ियां बनी हुई थीं । सुरंग में उतर जाने के बाद शिलाफलक को यथावत् यथास्थान बिठा दिया जा सकता था ।

प्रियंवदा अपने कक्ष के सुरंग-द्वार से उतरकर कुछ दूर तक सुरंग में चली । सुरंग में घना अंधेरा था । लेकिन कुछ ही देर में उसकी आँखें उस अंधेरे की अभ्यस्त हो गयीं । वह आगे बढ़ती गयी । काफ़ी दूर तक चलने के बाद भी सुरंग का अंतिम छोर दिखाई नहीं दिया । सुरंग के दूसरे छोर तक जाकर और फिर लौटकर वह उसका पूरा ब्यौरा विजय को देना चाहती थी । पर अब यह संभव नहीं था ।

सत्यता की साक्षी दूँगी । तुम्हें महावीर होने का यश प्राप्त होगा और निश्चय ही हमारा विवाह हो जायेगा । इस प्रकार हमारे लिए कोई ख़तरा न होगा '।'' प्रियंवदा ने कहा ।

विजय को यह सारी योजना अच्छी जान पड़ी और उसने राजकुमारी के लिए किसी भी संकट का सामना करने का निश्चय कर प्रियंवदा से कहा, ''राजकुमारी, आप जैसा कहेंगी, मैं करुँगा ।''

विजय का उत्तर सुनकर प्रियंवदा संतुष्ट होकर राजभवन के अन्दर चली गयी । इसके बाद उसने अपनी योजना को सफलतापूर्वक अमल में लाने के लिए विचार किया । सबसे पहले उसने सुरंग सम्बन्धी सारे विवरण प्राप्त करने चाहे, पर इस सम्बन्ध में किसी से भी कुछ पूछना ख़तरे से ख़ाली नहीं था । महारानी से पूछने पर वे सन्देह

सुरंग का अंतिम छोर शीघ्र ही दिखाई दे जाये, इस आशा से प्रियंवदा दौड़ पड़ी। थोड़ी दूर दौड़कर वह थक गयी। उसकी साँस फूल गयी। अब तो उसकी यह हालत होगयी कि वह एक कदम भी चलने में असमर्थ होगयी। प्रियंवदा एक स्थान पर बैठ गयी। वह लगभग आधी रात के समय निकली थी, इसलिए उसे नींद घेरने लगी। शरीर को शिथिल बना देनेवाली थकान और नींद—प्रियंवदा लाचार होकर सुरंग में ही एक जगह गहरी नींद सोगयी।

इस प्रकार वह कितनी देर तक सोयी, उसे कुछ पता न लगा। अचावक जब उसकी नींद खुली तो वह चौंककर उठ बैठी। चरों ओर घनघोरे अंधेरा था। एक-दो क्षण तक तो वह जान ही नहीं सकी कि वह कहाँ है, बात में उसे सब स्मरण आ गया। वह उठ खड़ी हई, पर ज़मीन पर सेने के कारण उसका सारा शरीर दर्द कर रहा था। फिर भी, वह बड़ी मीठी नींद सोयी थी। राजकुमारी को बड़ा भारचर्य हुआ, क्योंकि मुलायम गद्दों पर कभी उसे ऐसी नींद नहीं आयी थी।

प्रियंवदा के सामने फिर वही समस्या थी। सुरंग मार्ग में वह इतनी दूर निकल आयी थी कि वापस जाने का कोई प्रयोजन नहीं था। इसका एक कारण यह भी था कि अब तक राजकुमारी के गायब होने की ख़बर से सारे राजभवन में हलचल मच चुकी होगी। और राजकीय स्तर पर उसकी खोज का कार्य आरंभ हो चुका होगा। विजय अपने वचन का पालन करेगा। इसलिए प्रियंवदा को साहसपूर्वक आगे बढ़ना ही श्रेष्ठ प्रतीत हुआ।

इसके बाद वह लगन के साथ आगे बढ़ती गयी। समय तो बीतता जा रहा था, लेकिन सुरंग का अंतिम छोर हाथ में नहीं आ रहा था। अचानक उसे वह बात याद आगयी, जो एक बार उसके पिता ने उसकी माता से कही थी—'अगर सुरंग मार्ग से कभी जाना पड़े, तो अपने साथ कुछ भोजन और जल अवश्य रखना चाहिए, क्योंकि सुरंग की यात्रा लगभग दे दिन ले लेती है।'

यह बात स्मरण आते ही प्रियंवदा काँप उठी। उसे इस बात का ध्यान पहले क्यों नहीं आया? उसे यात्रा के लिए आवश्यक खाद्य सामग्री अपने

साथ रखनी चाहिए थी। अब क्या वह बिना खाये-पिये दो दिन की यात्रा कर सकेगी? पर अब ओखली में सिर देकर मूसल से डरने में कोई फ़ायदा न था। उपकार करनेवाले विजय का उपकार करने के लिए और माता-पिता की दुष्टतापूर्ण योजना को विफल बनाने के लिए उसे सब प्रकार की यातनाओं को सहन करना होगा। जो निश्चय किया है, उसे सिद्ध भी करना होगा।

प्रियंवदा अन्न-जल के बिना, शरीर की थकान के साथ इसी प्रकार उस कठिन मार्ग पर आगे बढ़ती गयी। दो दिन बाद वह सुरंग मार्ग के अंतिम छोर पर पहुँच गयी। उसने समझ लिया कि वह मार्ग एक महावृक्ष के विशाल तने में जाकर समाप्त होता है। वहाँ उसने ज़मीन में घरती हुई मोटी-मोटी जड़ों को देखा। वृक्ष के तने के भीतर एक संकरा-सा रास्ता था। प्रियंवदा ने बिना किसी संदेह के उस रास्ते में प्रवेश किया। वहाँ ऊपर जाने के लिए सीढ़ियां थीं। वह सीढ़ियों पर चढ़ गयी।

वहाँ अंधेरे में एक ओर रोशनी की एक लकीर कुछ उजाला कर रही थी। प्रियंवदा ने उस स्थान को सावधानी से देख कर वहाँ हाथ डालकर टटोला। उसके हाथ में चिटकनी जैसी कोई चीज़ आयी। उसे बगल की ओर खींचते ही द्वार खुल गया झूमती हुई ठंडी हवा का झोंका उसके चेहरे पर आ लगा।

प्रियंवदा को मानो प्राण-दान मिल गया। उसने यह विचार नहीं किया कि उसके चारों तरफ क्या है और वह जल्दी से दूसरी तरफ उतर गयी।

दूसरे ही क्षण उसे ज़ोर की चिल्लाहटें सुनाई

दीं—"देवी प्रत्यक्ष होगयी! देवी प्रत्यक्ष होगयी!"

प्रियंवदा चकित रह गयी। चिल्लानेवालों को देखने के विचार से वह अपना सिर घुमाना चाहती थी, लेकिन वह उसी क्षण बेहोश होगयी।

प्रियंवदा जिस स्थान पर बेहोश हुई थी, वहाँ से थोड़ी दूर पर शतनन्दन नाम का एक गाँव था। उस गाँव के सारे लोग मूर्ख थे। उनकी मूर्खता को आधार बनाकर दो आदमी उस गाँव पर अपना हुक्म चलाते थे। गाँव की प्रजा के लिए उन दो नेताओं की वाणी पत्थर की लक़ीर थी। सब लोग उन दोनों को देवता-तुल्य मानते थे और पर्व-त्यौहार के अवसरों पर उन्हें भेंट-उपहार अर्पित करते थे। इन दो 'देवताओं' के नाम थे रामधन और श्यामधन।

गाँव के किसी परिवार में कोई विपदा आती, तो उसके सदस्य सर्वप्रथम उन नेताओं को सूचना देते। वर्षा न होने पर, फ़सल न उगने पर, रोग होने पर सबको उन नेताओं से निवेदन करना पड़ता था। उनकी जानकारी और अनुमति के बिना किसी के घर कोई मांगलिक कार्य संपन्न नहीं हो सकता था।

शतनन्दन ग्राम की बात जब प्रियंवदा की कहानी के बीच में आ ही गयी है तो कुछ क्षणों के लिए मूल कहानी से हटकर आप इस गाँव के लोगों की मूर्खता का जायज़ा लीजिए—एक बात शंकर नाम के एक गृहस्थ के घर में आग लग गयी। तब घर के सभी लोग दौड़कर बाहर आगये। पर किसी ने आग बुझाने की कोशिश नहीं की। ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिए, यह

जानने के लिए शंकर उन नेताओं के घर की तरफ दौड़ा। उस समय रामधन और श्यामधन गहरी नींद सो रहे थे। उन्हें उठाने में शंकर को थोड़ा समय लगा। नींद से जागकर उन्होंने असली बात का पता लगाया और आदेश दिया, "पानी डालकर आग बुझा दो!" शंकर ने ऐसा ही किया। इससे पास-पड़ोस के घर तो जलने से बच गये, लेकिन शंकर का घर तब तक पूरी तरह जल चुका था।

तब रामधन और श्यामधन ने शंकर से कहा, "तुमने ज़रूर कोई पाप किया है। वही पाप आग के रूप में आकर तुम्हारा घर जला गया है। फिर भी तुमने हम पर विश्वास किया। इसलिए घर के साथ तुम लोग नहीं जले। घर जल गया तो क्या हुआ? उसे तो फिर से बनाया जा सकता है। पर मनुष्यों के गये हुए प्राण नहीं लौट सकते। हम इसी तरह सबकी रक्षा करते हैं।"

शंकर उनके चरणों में प्रणाम करके लौट गया।

ऐसी ही एक अन्य घटना इस प्रकार है। एक बार भीमराज नाम के एक गृहस्थ का लड़का विनोद बीमार पड़ गया। उसने अपने बेटे विनोद को लेजाकर दोनों नेता रामधन और श्यामधन को दिखाया। वे थोड़ा-बहुत इलाज करना जानते थे। उन नीमहक़ीमों के इलाज से भाग्यवान लोग बच जाते थे और बाकी लोग मर जाते थे।

भीमराज का लड़का विनोद भगवान को प्यारा होगया।

दोनों नेताओं ने भीमराज को समझाने के लिए कहा, "तुमने पाप किये हैं। वे ही पाप मृत्यु के रूप में आकर तुम्हारे बेटे को उठा ले गये हैं। इस दुनिया का कोई भी वैद्य तुम्हारे बेटे को नहीं बचा सकता था। वह हमारे हाथों के नीचे मरा है, इसलिए सीधे स्वर्ग को गया है। अगर किसी दूसरे वैद्य की चिकित्सा में वह मरता तो तुम्हारा बेटा नरक में जाता।"

भीमराज को यह सुनकर संतोष मिला कि उसका बेटा जीवित भले ही न रहा, पर वह सीधे स्वर्ग में गया है।

(शेष अगले अंक में)

प्रकृति के आश्चर्य

चमगादड़
विश्व में सबसे अधिक संख्या में जंगली जाती के स्तन्य जानवर टेक्सास के शान एंटोनिया की ब्राकन गुफ़ा के अन्दर हैं। ग्रीष्म ऋतु में इस घाटी में लगभग २० मिलियन चमगादड़ जमा हो जाते हैं।

समस्त मछलियों में मार्लिन जाती की मछलियाँ अत्यधिक तेज़ गति से तैरती हैं। ये मछलियाँ ४० - ५० मील प्रति घंटा की गति से यात्रा करती हैं।
तीव्र गतिवाली मछली

हिम गुफ़ा
विश्व भर में सबसे बड़ी तथा सदा हिम से भरी गुफ़ा आसिट्र्या के ऐसत्री वेलट में है। इसकी लम्बाई २६ मील है। इस गुफा का मुख द्वार ३,३०० फुट ऊँचाई पर है। ग्रीष्मकाल में भी यहाँ का तापमान न्यूनतम हो जाता है।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ मई १९८७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

M. Natarajan

S. B. Prasad

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ मार्च १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

जनवरी के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो: प्यार कहाँ!

द्वितीय फोटो: डर कहाँ!!

प्रेषक: प्रेम किशोर, मानिकपुर-४९६५५१, रायगढ़ (म. प्र.)

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा: रु. ३०-००

चन्दा भेजने का पता:

डॉल्टन एजेन्सीस, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये:

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form VI), Newspapers (Central) Rules, 1956

1. Place of Publication	.. 'CHANDAMAMA BUILDINGS' 188 N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
2. Periodicity of Publication	.. MONTHLY .. 1st of each calendar month
3. Printer's Name	.. B.V. REDDI
Nationality	.. INDIAN
Address	.. Prasad Process Private Limited 188 N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
4. Publisher's Name	.. B. VISWANATHA REEDI
Nationality	.. INDIAN
Address	.. Chandamama Publications 188 N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
5. Editor's Name	.. B. NAGI REDDI
Nationality	.. INDIAN
Address	.. 'Chandamama Buildings' 188 N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
6. Name and Address of individuals who own the paper	.. CHANDAMAMA PUBLICATIONS PARTNERS: 1. B.VENKATRAMA REDDY 2. B.V.SANJAY REDDY 3. B.V.NARESH REDDY 4. B.PADMAVATHI 5. B.VASUNDHARA 6. B.V.SHARATH REDDY 7. B.N.RAJESH (Minor) 8. B.L.ARCHANA (Minor) 9. B.L.ARADHANA (Minor) (All Three Minors admitted to the benefits of Partnership)

I, B. Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

B. VISWANATHA REDDI
Signature of the Publisher

1st March 1987

A Super treat in every sweet!

SUPER SIZE! SUPER TASTE!

nutrine

SuperStar

Premium toffees

TWIN TREAT

DELITE

TOP CREAM

Heavenly delights

nutrine भारत में सबसे ज़्यादा बिकनेवाला चॉकलेट

न्यूट्रीन कन्फेक्शनरी कं.प्रा.लि., चित्तूर, आं.प्र.

CLARION/NC/8636

राम और श्याम
पारले
की सूझबूझ का कमाल
पड़ोस के बैंक की ओर निकले राम और श्याम, अपनी हफ्ते भर की बचत का करने सुरक्षित इंतज़ाम, रास्ते भर वे चूसते रहे रसीली पॉपिन्स, जी भर...
ममम... पॉपिन्स!
झटके से आया एक स्कूटर जिस पर थे दो लुटेरे सवार, रोका, घुसे बैंक में और किया गोलियों से वार... धांय धांय!
अरे!
BANK
बैंक के हमारे दोस्तों की जान है खतरे में, चलो जल्दी कुछ करें.
बैंक के पिछले दरवाज़े से घुसे राम और श्याम.
दंग रह गए राम और श्याम.
हैंड्स-अप!
हमारे हवाले कर दो सारी रकम!
चलो इन्हें मज़ा चखाएं!
दबे पांव राम और श्याम लुटेरों के पीछे पहुंचे, पॉपिन्स के बंद पैक उनकी पीठ पर बंदूक की तरह कोंचे.
हैंड्स-अप!
घबरा गए लुटेरे, तुरंत बंदूक फेंकी, राम और श्याम ने इनके चारों तरफ बांध दी रस्सी.
शाबाश राम और श्याम!
कैसे हुई तुम्हारी इतनी हिम्मत?
ये तुम्हारी सूझबूझ का है कमाल!
ये तो है हमारे पॉपिन्स पैक की करामात
पारले पॉपिन्स
POPPINS
रसीली.प्यारी.मज़ेदार.
everest/86/PP/413-hn